द्वितीय अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यासों का कथ्यात्मक परिचय

2.1. प्रभा खेतान के उपन्यासों का कथ्यात्मक परिचय

2.1.1. आओ पेपे, घर चलें

2.1.2. तालाबंदी

2.1.3. अग्निसंभवा

2.1.4. एड्स

2.1.5. छिन्नमस्ता

2.1.6. पीली आंधी

2.1.7. अपने-अपने चेहरे

2.1.8. स्त्री-पक्ष

2.2. प्रभा खेतान के उपन्यासों में चिंतन पक्ष के विविध आयाम

2.2.1. जीवन के प्रति आस्था, जिजीविषा और सकारात्मक दृष्टि

2.2.2. स्त्री-विमर्श

2.2.3. रिश्तों का खोखलापन

2.2.4 औरतों की रूढ़िग्रस्तता

2.2.5 स्त्री की स्वार्थी वृत्ति

2.2.6 पूँजीपति मारवाड़ी समाज की विसंगतियाँ

निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यासों का कथ्यात्मक परिचय

प्रस्तावना-

'कथा' 'कथानक' या 'कथावस्तु' शब्द का प्रयोग विद्वानों ने प्रायः एक-दूसरे के पर्याय अथवा समानार्थी के रूप में किया है। कथानक या कथ्यात्मक शब्द यद्यपि अंग्रेजी शब्द 'प्लॉट' का ही सही पर्याय नहीं है, तथापि उपन्यास के अध्ययन में किसी हद तक यह शब्द ग्राह्य हो सकता है और यह प्रचलित भी है। ई. एम. फार्स्टर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ऐसपेक्टस् ऑफ द नावेल' में कथात्मक (कथातत्व) और प्लॉट के बीच सूक्ष्म अंतर को स्पष्ट किया है। उनके विचार से कथा घटनाओं का क्रम मात्र है, जब 'प्लॉट' उनके बीच कार्य कारण संबंध को भी महत्व देता है। कथा तत्व का काम केवल मनुष्य की स्वाभाविक उत्सुकता को बढ़ाना और उसको तुष्ट करते चले जाना है। लेकिन 'प्लॉट' पाठक से बुद्धिमत्ता, स्मृति और धैर्य की माँग करता है। उपन्यास की मूल कथा को ही कथानक कहते है। उपन्यास का संबंध जिन घटनाओं और व्यापारों से होता है वे सब कथात्मक के अंतर्गत समाविष्ट हो जाते हैं। कथानक के लिए कथावस्तु, विषयवस्तु, इतिवृत्त, कथा, वस्तु, वृत्त, कथ्यात्मक इन शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि, उनके कथ्य में वैचारिक मौलिकता, रोचकता, वास्तविकता, घटनाओं की शृंखला बद्धता, मानव जीवन की समस्या आदि विशेषताएँ विद्यमान हैं।

2.1 प्रभा खेतान के उपन्यासों का कथ्यात्मक परिचय-

प्रभा खेतान के उपन्यासों में वर्तमान का यथार्थ चित्रण है। स्त्रीवाद की यह एक सशक्त लेखिका है। अपने उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने स्त्री जगत में हलचल मचा दी है। लेखिका ने अपने अनुभव जगत को रचनात्मकता के केंद्र में रखकर उसे देशकाल के ओर-छोर तक विस्तृत कॅनवास पर फैला दिया है। हिंदी में मारवाड़ी समाज की रूढ़ियों के बंधनों से जकड़ी नारी जाति की बेबसी और लाचारी का विस्तृत

चित्रण प्रभा खेतान ने किया है। विदेशी नारियों की व्यथा को भी उन्होंने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है।

प्रभा जी ने अपनी बात सहज भाषा में कही है, उनमें क्लिष्टता नहीं है। पात्रों में भी इतना गहन अवसाद एवं छटपटाहट है कि उनको उजागर करने में ही कहानी स्वयंमेव बन जाती है। हर घर में नारी के लिए रूढ़ियों के कटहरे हैं। उनसे बाहर निकलने का कोई रास्ता ही नहीं है। वे रूढ़िवादिता की इन बेड़ियों को तोड़ना चाहती हैं। वे खुली हवा में साँस लेना चाहती हैं। वे अपने पिंजड़ों की तीलियाँ तोड़ना चाहती हैं, पर भीतर ही भीतर लहुलुहान होकर दम तोड़ देती हैं। प्रभा खेतान के उपन्यासों का यह दर्द सर्वव्यापी है। पाठक उस दर्द का एहसास तो करता है पर उसे दूर करने का कोई रास्ता नहीं बता सकता, पर विचार तो कर सकता है।

प्रभा खेतान ने आठ उपन्यासों का सृजन किया। जिसमें दो लघु उपन्यास हैं और छह बड़े उपन्यास है। कुछ उपन्यास मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुए है। उनके कुछ उपन्यास भारतीय परिवेश से संबंधित है तो कुछ विदेशी परिवेश से। उनके अधिकांश उपन्यास उद्योग जगत और स्त्री जगत से संबंधित है। कुछ उपन्यास पात्र केंद्रित है तो कुछ प्रासंगिक है। उनके उपन्यासों में मौलिकता, रोचकता, सत्यता, निर्माण कौशल, मानव जीवन की समस्याएँ, युग-जीवन आदि पक्षों का चित्रण हुआ है। उनके उपन्यासों का कथानक सरल एवं जटिल दोनों प्रकार का है। उनके प्रत्येक उपन्यास का कथ्य सूरज की तरह अपनी कोई विशेषता, विचार और संवेदना की शफक छोड़ जाता है।

2.1.1. आओ पेपे, घर चलें-

'आओ पेपे, घर चलें', प्रभा खेतान का प्रथम उपन्यास सन् 1990 में सरस्वती विहार, दिल्ली से प्रकाशित हुआ। इसमें उनके जीवन संघर्षों और कठिनाइयों का यथार्थ चित्रण है। इसमें प्रभा जी ने प्रभा आइलिन एलिजा, कैथरिन मूर, मरील, हेल्गा, क्लारा ब्राऊन जैसे नारी पात्रों द्वारा इसके कथानक को साकार किया है। इस आत्मकथात्मक उपन्यास में लेखिका ने नारी जीवन की पीड़ा, अपमान और वंचना को अभिव्यक्त किया है। इसमें उन्होंने विदेशी भूमि पर अनुभूत नारी और उसकी पीड़ा

का तथा अपनी नारी विषयक संवेदनाओं का चित्रण किया है। हिंदी उपन्यास साहित्य में भारतीय नारी की पीड़ा का चित्रण अधिक मात्रा में तथा अनेक रूपों में देखने को मिलता है, पर अमरिका जैसे देश में भी नारी की स्थिति और गति भारतीय नारी से भिन्न नहीं है। वह भी वह सब कुछ झेलती है जो भारतीय नारी। डॉ.अशोक मराठे इस उपन्यास के संदर्भ में लिखते हैं- "अमरीकी औरत के भयानक सच को प्रस्तुत करने वाला यह हिंदी का शायद पहला उपन्यास होगा।"[1]

इस उपन्यास का कथानक एक संवेदनशील भारतीय लेखिका स्वयं प्रभा खेतान की आँखों देखी अमरिकी जीवन की जीती जागती तसवीर है। इस उपन्यास की अनुभूति परख जीवित कथावस्तु के संबंध में गोपाल राय लिखते हैं - "उनका पहला उपन्यास 'आओ पेपे, घर चलें' पढ़कर मैं हैरान था, यह किसी लेखिका की ईमानदारी का सबूत है।"[2]

प्रभा जी 22 साल की उम्र में 'स्टुडेंट एक्सचेंज प्रोग्राम' के तहत लॉस एंजेल्स में ब्युटी थेरापी का कोर्स करने गई। वहाँ के अनुभवों को उन्होंने बड़ी ही संजीदगी से इस उपन्यास में उभारा है। अमरिका में प्रभा को लगा मानो लोग भाग रहे है, काम ही काम, रात-दिन मेहनत। जीवन स्तर को और ऊपर उठाने के लिए पैसा, पर संपन्नता के बीच भी टूटते हुए घर और टूटते हुए इंसान। बाहर से खुश दिखते हुए लोग, लेकिन मन के भीतर जमता, पिघलता हुआ लावा उफन रहा है।

आर्थिक स्वतंत्रता को जीने की पहली शर्त माननेवाली प्रभा ने देखा कि संपन्न घरों की अमरिकी स्त्री आर्थिक रूप से स्वावलंबी होने पर भी त्रासदीमय जीवन जी रही है। उनके जीवन में अकेलेपन का दर्द है। आइलिन, एजिला, मरील, हेल्गा और कैथी जैसी महिलाओं के जीवन में भी पुरुष का शोषण और दमन दिखाई देता है।

सत्तर वर्षीय आइलिन दो पति और पाँच प्रेमी होने के बावजूद दु:खी एवं एकाकी है। अपने जर्जर मन को वह पेपे (कुत्ते) के सहारे बहलाती है। आइलिन कुत्ते को बेटा मानकर जानवर में आदमी खोजती है। जीवन के दु:खों को भुलाने के प्रयास में वह अपने को पल-पल मरती हुई महसूस करती है। औरत सदियों से रोती आयी है, उसकी यही औरत होने की क्रिया प्रभा जी को बर्दाश्त नहीं होती। औरत के

जीवन की सत्यता आइलिन प्रभा को बताती है- "औरत कहां नहीं रोती और कब नहीं रोती ! वह जितना भी रोती है, उतनी ही औरत होती जाती है।"[3] प्रभा जी ने इसमें केवल अपने मारवाड़ी समाज या भारतीय समाज में स्थित औरत की पीड़ा को ही उद्‌घाटित नहीं किया, बल्कि विश्व संदर्भ में नारी की नियति को भी उद्‌घाटित किया है।

त्रिशंकु जीवन जीनेवाली एलिजा अपने पति का प्यार पाने के लिए हर प्रकार से समर्पित रहती है। डॉ. डी. को क्लारा ब्राऊन की बाहों में देख वह अपने आप को असहाय महसूस करती है। वह पति को सजा भी देना चाहती है, पर पति से बेइंतहा प्यार करने के कारण ऐसा कदम नहीं उठा पाती। वह जानती है - "प्यार एक उड़ता हुआ पाखी है। वह कभी एक डाल पर नहीं बैठ सकता।"[4] पति का प्यार न पाने के कारण वह आत्महत्या का प्रयास भी करती है। हर अपमान, वंचना, पीड़ा को सहकर गीली लकड़ी की तरह सुलगनेवाली एलिजा तलाक के कागज पर हस्ताक्षर कर देती है।

प्रभा जी यहाँ पारिवारिक विघटन के साथ-साथ टूटते-झरते और समाप्त होते रिश्तों के भी दर्शन कराती है। चालीस वर्षीय मरील अपने पति से अलग रहती है। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होते हुए भी वह दु:खी है। पति-पत्नी के अहम् के टकराव से दोनों लड़कियाँ दिशा भ्रमित हो रही है। इस परिवार को देखकर प्रभा सोचती है- "यह घृणा ! क्या इसे परिवार कहूं? एक मां जिसकी दो बेटियां और किसी का किसी से लगाव नहीं। बाहर लोगों के सामने हंसती हुई, जवान दिखती हुई मरील ! बेटियों के सामने बेतरह हांफती-हारती हुई मरील !"[5] परिणाम स्वरूप मरील बात-बात पर फूलों की तरह उन पर गालियाँ बरसाती है। पति के बारे में पूछने पर क्रोध से कहती है- "भाग गया साला, किसी बीस बरस की लड़की को लेकर। कोर्ट का दरवाजा खटखटाने पर आजकल हजार डालर महीने का भेजता है, बास्टर्ड।"[6]

डॉ. बेरी और हेल्गा का घर सुविधा-संपन्न है, लेकिन परिवार के सदस्यों में आपसी समझ बिल्कुल भी नहीं हैं। बाहर से देखने में लगता है कि परिवार सुखी है। लेकिन अंदर से इस परिवार की दीवारें ढह गई हैं। हेल्गा अपनी बेटी बिटिना को

पिता की असलियत बताते हुए कहती है- "तुम जो अपने पिता की वकालत कर रही हो, तो सुन लो, उस आदमी ने कभी, किसी दिन मुझसे प्यार नहीं किया। प्यार किया होता, तो आज यह नौबत नहीं आती। उसने सिर्फ मुझ पर दया की है।"[7] हेल्गा नस्लवाद की शिकार है। वह अपने अतीत को दोहराती रहती है। अपने भीतर की दहकती हुई आग को हमेशा जलाये रखना चाहती है। वह दु:खों को याद कर शेरनी की तरह बदला लेना चाहती है। वह प्रभा को बताती है- "मैं नहीं चाहती कि अपने दु:खों को भूल जाऊं । आदमी यदि ऐसे दु:खों को भूलता है, तब आदमी नहीं रह जाता। वह जानवर भी नहीं रहता, क्योंकि बदले की आग तो शेरनी में भी रहती है, नागिन भी बदला लिए बिना नहीं मानती।"[8] वह अपने परिवार से छुटकारा चाहती है। वह अपने पूर्ण अस्तित्व को टटोलती है और अपने जीवन के बचे हुए दिन एवं बची हुई शक्ति को अपनी जाति के लिए खर्च करना चाहती है।

परपीड़न में सुख माननेवाली कैथी जीने का राज आत्मसम्मोहन मानती है। स्त्री जीवन को बड़ी जिंदादिली से जीनेवाली कैथी खुशियों के आशियाने में चारों तरफ महक रही है। कैथी को देखकर प्रभा कहती है "कुल मिलाकर पहली बार लगा कि स्वतंत्र आत्म-विश्वासी औरत से मिल रही हूं, जो प्रपात-सी झरती हुई जिंदगी की मिसाल है। बहुत ही भा गई वह। औरत हो, तो कैथी जैसी। जिंदगी कोई जीए तो कैथी जैसी। मस्ती में कोई नाचे-गाए, दोस्तों का जमघट जमाए तो कैथी की तरह।"[9] कैथी कुछ करना चाहती है। अपने जीवन की सार्थकता को वह काम में खोजना चाहती है। पति उसे काम करने नहीं देता तो उसे मनाने के लिए वह दिन-रात खूब पैसे फूँकती है। उसकी नजर में उसका पति एक अहंकारी सूअर है। कैथी प्रभा को न्यूयार्क के खोखलेपन के बारे में भी बताती है। लेखिका ने कैथी के माध्यम से औरत को अपनी आदतों का गुलाम न बनते हुए ज्यादा से ज्यादा काम कर स्वावलंबी बनने की सलाह दी है। अपने पति के पैसों का भरपूर उपभोग करनेवाली श्वेत कैथरिन भी नस्लवाद के कारण हारलेम में अश्वेत लोगों के हाथों बलात्कार होने से बचकर डिप्रेशन में चली जाती है।

बहन एलिजा का आत्महत्या करने का प्रयास और डॉ.डी.से तलाक की जानकारी मिलने पर कैथी शांत ही रहती है। पिछले चार महीने अमरिका में बिताने के बाद प्रभा सोचती है, ''मेरी उम्र अचानक बहुत पक गई है। औरत की जिंदगी के भयानक सच मेरे सामने परत-दर-परत उधड़ते गए थे और यहां पर यदि यह स्थिति है, तो मेरे देश में, और वह भी मारवाड़ी समाज में कैसे झेलूंगी कैसे ?''[10] यह सब माहौल देखने के बाद प्रभा को अंत में पेपे की याद आती है। वह अंत में कहती है क्या प्यार एक आदत है ? अपने घर की परिवार वालों की याद उसे भी सताती है। इसलिए वह अपने मन से ही कहती है, 'आओ पेपे, घर चलें।'

प्रभा खेतान ने इस उपन्यास में नारी जीवन की पीड़ा के साथ-साथ देश प्रेम की भावना भी अपने पात्रों द्वारा उजागर की है। मरील प्रभा को पैसों का लालच दिखाकर अमरिका में रहने की सलाह देती है। आर्थिक स्वतंत्रता को महत्व देनेवाली प्रभा अपने देश से प्रेम करती है। मरील भी गांजा के लत से अपने देश की नई पीढ़ी को और अपने देश को बरबाद होते देख दु:खी होती है।

प्रभा जी ने इस उपन्यास में औरत की विसंगति, जीवन संघर्ष और यांत्रिकता के दर्शन कराए हैं। वह भौतिक सुख-सुविधा होने पर भी दु:ख के सागर की लहरों में डूबती दिखाई देती है। प्रभा जी ने अपनी प्रथम और प्रिय रचना में नारी विषयक संवेदना को लेकर भारतीय ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर की औरत की जिंदगी के भयानक सच को परत-दर-परत खोलने का उल्लेखनीय काम किया है।

इस उपन्यास के माध्यम से प्रभा ने यह बताने का प्रयास किया है स्त्री न सिर्फ भारत में दुखों को झेल रही है, अपितु वह तो अमेरिका जैसे महान देश में भी पीड़ा को झेल रही है। प्रभा खेतान का 'आओ पेपे, घर चलें' उपन्यास एक संवेदनशील ह्रदय की धड़कन की तरह स्पन्दित हो रहा है। इसमें उतार-चढ़ाव के बीच झूलता इंसान प्रस्तुत हुआ है। प्रभा जी ने अनुभवों को पाठक के साथ बाँटा है और वे अपनी भावनाएँ पाठक के मन तक पहुँचाने में सफल भी हुई है। नारी विमर्श की भूमि को मजबूती देने वाला 'आओ पेपे, घर चलें' उपन्यास काफी चर्चित रहा है।

2.1.2 तालाबंदी-

'तालाबंदी' यह प्रभा खेतान का सन् 1991 में सरस्वती विहार, दिल्ली से प्रकाशित दूसरा उपन्यास है। 116 पृष्ठों के इस उपन्यास में लेखिका ने श्याम बाबू, सुमित्रा और रेवा जैसे प्रधान पात्रों को लेकर कथानक बुना है। श्याम बाबू के माध्यम से इसमें मारवाड़ी समाज की व्यवसायिक दृष्टि और संघर्षमय जीवन की कहानी वर्णित हैं। इसमें उद्दमी के सामने आने वाली जटिल समस्याओं का भी यथार्थ चित्रण किया गया है।

प्रारंभ में श्याम बाबू की आर्थिक संपन्नता दिखाई देती है। कपड़े की सप्लाई करनेवाला श्यामू अपनी मेहनत एवं लगन के बल पर श्यामसुंदर जी बन जाता है। कालूराम अग्रवाल का परिवार पीढ़ी-दर-पीढ़ी मुनीमगिरी का काम करता आ रहा है। उनकी इच्छा है कि उनका बेटा श्यामसुंदर भी यही पारम्परिक काम संभाले। श्याम बाबू मेहनती आदमी है। इन बातों से दूर वह अपना स्वयं का व्यवसाय स्थापित करने के सपने संजोता है। वह आर्थिक तंगी से मुक्ति पाने के लिए पिता की तरह मुनीमी करने से इन्कार कर देता है। वह अपने बल पर कपड़ा सप्लाई का काम शुरू करता है। उसमें कार्य करने की क्षमता है। दृढ़ निश्चयी श्याम बाबू जो सोचता है वह करके दिखाता हैं। वह गारमेंट एक्सपोर्ट के धंधे में अपनी किस्मत आजमाता हैं। अपनी 'युनिटेक एक्सपोर्ट' नाम की कंपनी स्थापित करता हैं। उसकी लगन उसे सफलता के उच्च शिखर तक पहुँचाती है। पर श्याम सुंदर जी जिन्हें खुश करना चाहते हैं, वे ही उनसे दूर होते जाते हैं। इसी बीच फैक्ट्री में बरसों से काम करनेवाले मजदूरों में कम्युनिस्टों के मजदूर संगठन 'सीटू' (सेंटर फॉर इंडियन ट्रेड युनियन) की स्थापना होती है। श्याम बाबू और मजदूर युनियन के बीच सुसंवाद स्थापित करने का काम युनियन अध्यक्ष शेखर बाबू करते हैं। श्याम बाबू मजदूरों की समस्याओं को सुलझाने के लिए मार्क्स को पढ़ना और समझना चाहते हैं। मार्क्स की कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो पुस्तक ले आते हैं लेकिन अपने-आप पढ़कर उसे समझ नहीं पाते। वह एक वृद्ध मास्टर हरिनारायण चट्टोपाध्याय से मार्क्स की बारीकियाँ सीखने जाते हैं। मास्टरजी उनको श्रम का अलगाव, उपभोक्ता वस्तुओं का प्रसारण, निरंतर मुद्रास्फीति, गिरता

हुआ जीवन स्तर, पूंजी का केंद्रीकरण और नौकरशाही की फिजूलखर्ची आदि का पाठ पढ़ाते हैं।

श्याम बाबू फैक्ट्री के मजदूरों से सीधा संपर्क कर उनमें फूट डालकर युनियन नहीं तोड़ना चाहते बल्कि युनियन को अपने मतानुसार चलाना चाहते हैं। उनके संबंध में प्रभा जी लिखती है- "वे कभी अपने स्टाफ का आत्म-चित्र नहीं तोड़ते थे। कभी किसी से उसके काम की सफलता का बोध नहीं छीनते थे..। हर व्यक्ति के साथ उनका खुला व्यवहार, आत्मीय स्वभाव, वक्त जरूरत पर रूपया उधार देना, साल के साल तरक्की। चूंकि खुद वे गरीबी से ऊपर उठे थे, व्यर्थ की मालिकपना वे दूसरों पर नहीं डालते।"[11] उनके इस भोलेपन के कारण फैक्ट्री में दूसरी युनियन 'हिन्द मजदूर' की स्थापना होती है। जिससे फैक्ट्री में तालाबंदी की नौबत आती है। श्याम बाबू मजदूरों से दूर होते जाते हैं। फैक्ट्री की बागडोर अपने हाथ में लेने की गलती का उन्हें एहसास होता है। वे दु:खी हैं- "मैं अपने ही मजदूरों से दूर होता जा रहा हूं। शेखर दा ने तो फैक्ट्री संभाल रखी थी। गलती मेरी हुई। मैंने उनका नेतृत्व छीनकर अपने को स्थापित करने की चेष्टा की। यह भूल गया कि मैं एक विशिष्ट वर्ग का प्रतीक हूं। मैं अकेला चाहे कितना भी भला होने की चेष्टा करूं मगर मेरे नाम के साथ तो शोषण की परंपरा जुड़ी हुई है। मैं-'मैं' नहीं, एक 'वर्ग' हूं। मजदूरों को मेरी उदार नीति पर भी भरोसा नहीं हो सकता।"[12]

व्यवसाय जगत के उतार-चढाव के साथ प्रभा जी ने इसमें पारिवारिक संबंधों के तनाव और पिता-पुत्र के संघर्ष को भी अच्छी तरह उतारा है। श्याम बाबू की माँ बेटे को श्रवणकुमार समझती है। अपने बेटे की मेहनत और सफलता को देखकर ईश्वर से उसकी रक्षा की प्रार्थना करती रहती है। परंतु धन के पीछे दौड़ता हुआ अपनी महत्वाकांक्षाओं की सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ बेटा इसी धन की वजह से अपनों से दूर होता जाता है। माँ की शिकायत है - "मेरो सांवरो भी धन के पाछे बदल गयो।"[13] श्याम बाबू की पत्नी सुशील है तथा सुघड़ता से घर चलाने में दक्ष है। पति की सेवा करना और आज्ञा मानना वह अपना धर्म समझती है। सुमित्रा का मन पति के साथ दो पल बिताने को तरस जाता है। अनेक उलझनों में उलझा पति उसकी

शारीरिक जरूरतों को पूरा नहीं कर पाता है। श्याम बाबू की व्यवसायिक व्यस्तता पति-पत्नी के संबंधों में ठंडापन निर्माण करती है। आज अर्थ मनुष्य पर हावी हो रहा है। इसके बारे में डॉ.माधवी जाधव कहती है- "मनुष्य की दृष्टि अर्थोन्मुखी तथा अर्थकेंद्रित हो गई है। दिनों दिन अर्थपूजक वृत्ति बढ़ती जा रही है। विशेषत: समाज के अर्थ संपन्न वर्ग में अर्थ जुटाने की हवस परम कोटि तक पहुँच गई है। अर्थ ही वह सर्प है जिसके दंश से उन्मादी होकर व्यक्ति अर्थ को हस्तगत करने का सतत प्रयत्न करता है। अर्थोन्माद में सारी संवेदनाओं को भूलकर केवल उसकी अर्थ संवेदना ही बच जाती है। इस स्थिति में उसे अपनी पत्नी की भावनाओं-कामनाओं को समझने-परखने के लिए अवकाश नहीं मिलता।"[14]

श्याम बाबू के एक बेटा है, जो बी.कॉम. फाइनल ईयर में है। अपने बेटे को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाने की इच्छा श्याम बाबू के मन में है लेकिन बेटा पप्पू अपने पिता के विचारों से सहमत नहीं हो पाता। वह दिन-प्रतिदिन बिघड़ता जाता है। जनरेशन गैप के कारण वह अपने पिता को दयनीय स्थिति में पाता है। वह बुआ पुष्पा और उसका बेटा विक्रम की जी-हुजुरी को अच्छी तरह समझता है। दो पीढ़ियों के बीच की अंतराल के बारे में डॉ.माधवी जाधव लिखती हैं- "आज पीढ़ियों के बीच अंतराल बहुत अधिक दिखाई देता है। फलस्वरूप मूल्यों की टकराहट संबंधों में वितृष्णा पैदा करके एक विकराल समस्या का रूप धारण कर रही है।"[15] पप्पू पूरी तरह व्यवहारिक और यथार्थवादी है। श्याम बाबू के तीन बहनें हैं। वे उनकी गृहस्थी को भी व्यवस्थित करते हैं। विक्रम स्वार्थ के कारण मामा की झिड़कियों को सहता है। श्याम बाबू के परिवार में परस्पर दूरियाँ, विचार भिन्नता, स्वार्थता यह सारी स्थितियाँ केवल धन के कारण निर्माण हुई हैं।

श्याम बाबू अपनी ही लगाई आग में झुलसने लगते हैं। वे सीटू युनियन के वर्चस्व को समाप्त करना चाहते हैं। वे चुपके से मध्यमग्राम में नयी फैक्ट्री लगाते है। युनिटेक एक्सपोर्ट से सीटू के मजदूरों को पदत्याग दिलवाते है और उनको अपनी मध्यमग्राम वाली नई फॅक्टरी पर लगाकर अपने आपको तथा अपनी फैक्ट्री को बचा लेते हैं।

इसमें प्रभा जी ने निजी प्रबंधन और मजदूरों के परस्पर विरोधी हितों के टकराव, उससे उत्पन्न तनाव, पिता-पुत्र संघर्ष के रूप में पीढ़ियों का संघर्ष, पारिवारिक संबंधों में तनाव और अत्यंत कट्टर मारवाड़ी समाज की व्यवसायिक उहापोह का बड़ा ही यथार्थ चित्रण किया है। बंगाल में आये दिन कारखानों का बंद होना केवल मजदूर ही नहीं बल्कि निर्माता, निर्यातक और उद्योगपति सभी के लिए परेशानी का कारण बना था। व्यापार जगत की समस्या और सरकार की पिछड़ी आर्थिक नीति को लेकर प्रभा जी को उस समय जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा उसका यथार्थ चित्रण उपन्यास के नायक श्याम बाबू के माध्यम से हुआ है। वैसे उपन्यास का नायक श्याम बाबू कोई और न होकर स्वयं प्रभा जी है।

प्रभा जी ने अपने उपन्यास में श्रमिक वर्ग की ज्यादा तरफदारी की है। वह सर्वहारा वर्ग के श्रम को महत्व देना चाहती है, क्योंकि वह उन कारीगरों की पसीने की गंध को एक-एक कमीज में बसी हुई देखती है। इस उपन्यास में लेखिका समाजवाद की स्थापना कर रामराज्य की स्थापना की ओर संकेत करती हुई नजर आती है। इस प्रकार व्यवसाय जगत की उठापटक और समाजवाद लाने की प्रक्रिया में मालिक मजदूर के बीच रामराज्य की कल्पना को साकार करने हेतु लिखा यह छोटा-सा उपन्यास आजाद भारत में समाजवाद के स्वप्न को कैसे साकार किया जा सकता है, यह स्पष्ट करता है। इस उपन्यास के कथ्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि लेखिका पाठक को घर की चार-दीवारी से उठाकर व्यापार की दुनिया में ले गई है। फैक्ट्री को बचाने के लिए फैक्ट्री पर तालाबंदी का बोर्ड लगाकर व्यापार जगत के दाँव-पेच को प्रदर्शित करने में वह सफल हुई हैं। उपन्यास की कथावस्तु उद्दमी और मजदूर के संबंधों पर काफी प्रकाश ड़ालती है तथा उद्दमी के सामने आने वाली समस्याओं को व्यक्त करती है।

2.1.3 अग्निसंभवा-

प्रभा खेतान का यह उपन्यास 'हंस' पत्रिका में मार्च 1992 से मई 1992 तक धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ। इसमें प्रभा ने आइवी, प्रभा, शिव आदि पात्रों को लेकर उपन्यास के कथानक को उभारा है। इसके कथानक में प्रभा जी मुख्यत: दो

विषयों पर प्रकाश ड़ालना चाहती है। एक तो चीन की राजनीतिक उठापटक में बीजिंग विश्वविद्यालय के छात्रों ने तियेनमैन स्कवायर में किए आंदोलन के प्रति सरकार का रवैया और दूसरा चीन के मामूली किसान की बेटी उपन्यास की नायिका आइवी का संघर्षमय जीवन से उभरकर हाँगकाँग के ब्राँच मॅनेजर के पद पर नियुक्त होना। प्रभा जी यहाँ पर चीन की राजनीतिक समस्या को पात्र वॉग के पत्रों के माध्यम से बताना चाहती है। साथ ही चीन पर अमरिका, हाँगकाँग एवं रूस की बढ़ती दादागिरी के साथ गोरी चमड़ी की शोषणपूर्ण नीति का भी पर्दाफाश करती है।

वैश्विक स्तर पर आज चीन तीसरी महासत्ता बनकर उभरा है। चीन ने अपने इस स्थान को प्राप्त करने के लिए अपनी दृढ़ कम्युनिस्ट अवधारणा का प्रयोग किया है। गोरी जाति के साथ मिलकर चीन की नौकरशाही ने वहाँ के लोगों के श्रम का शोषण किया है। सन् 1949 में माओ ने अपनी लालसेना के बलबूते पर कम्युनिस्ट क्रांति को सफल बनाया। लेकिन बाद में यह कम्युनिस्ट पार्टी तानाशाही बनकर लोगों का श्रम शोषण करने लगी। सन् 1965 से सन् 1970 के बीच जो सांस्कृतिक क्रांति हुई उसमें उन्होंने अपनी तानाशाही नीति का विरोध करनेवाले लोगों को समाप्त किया। प्रभा माओ की 'सांस्कृतिक क्रांति' को कुछ मात्रा में असफल मानती है, जिसके कारण चीन में भोगवादी संस्कृति का निर्माण हुआ। बेटी के बदले बेटे की चाह निर्माण हुई। प्रभा जी कहती है- "माओ की सांस्कृतिक क्रांति की सबसे बड़ी असफलता यह हुई कि, आज चीन में भोगवादी संस्कृति खुले रूप में पनप रही है। क्या कारण है कि वहाँ का किसान आज भी घर में बेटी के बदले बेटा चाहता है।"[16]

चीन में समय-समय पर सरकार की तानाशाही वृत्ति के विरोध में चीन के छात्र आवाज उठाते रहे और सरकार उन पर जुल्म करती रही। सन् 1989 में राजधानी बीजिंग में चीन के प्रसिद्ध सांस्कृतिक, राजनैतिक चौराहे पर बीजिंग विश्वविद्यालय के छात्रों ने वैचारिक स्वतंत्रता, पार्टी के शिकंजे से प्रेस की मुक्ति, वास्तव का जनतंत्र, जनता का राज आदि की स्थापना करने हेतु और चीन के नौकरशाही के जुल्म और भ्रष्टाचार को मिटाने हेतु एक शांतिपूर्ण जुलूस निकाला। परंतु चीन की तानाशाही सरकार ने उसके साथ जो खून की होली खेली उस पर वॉग के अपनी माँ

आइवी को लिखे पत्र और आलफर्ड शिव के मित्र द्वारा ली गई विड़िओ फिल्म के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। प्रभा जी भले ही अपने समस्त उपन्यास में कुल 10-15 पृष्ठों में इस क्रांति का वर्णन समाप्त कर देती है। परंतु यही क्रांति उनके उपन्यास का केंद्रबिंदू रही है।

उपन्यास के आरंभ में वॉग के अपनी माँ आइवी को लिखे पत्रों को पाठकों के सामने रखते हुए चीन की आर्थिक व्यवस्था से परिचित करवाकर उसके इतिहास को परत-दर-परत खोला गया है। लेखिका कहती है- "क्या वे महज एक बेटे के पत्र थे अपनी मां के नाम? या फिर इतिहास के इपक थे जिन्हें समझना जरूरी था, जिन्हें बिना समझे स्थान और काल के परे नहीं जा पाते।"[17]

वॉग एक मामूली किसान का बेटा है, वह हाँगकाँग की भोगवादी दुनिया को छोड़ बीजिंग में अपनी जड़ों को समझने आता है। उसका देशप्रेम उसे वहाँ खींच लाता है। वह चीन में वैचारिक विकास से समन्वय स्थापित करना चाहता है। हिंसा के बदले अहिंसा के पथपर चलना चाहता है। माओ की पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चायना के पिछले चालीस वर्षों से किये हुए वादों की पूर्ति चाहता है। चीन की साम्यवादी तानाशाही व्यवस्था से वॉग मुक्ति चाहता है। वह चीन में वैचारिक क्रांति लाकर वास्तव के जनतंत्र की स्थापना कर, रामराज्य की स्थापना करना चाहता है। साथ ही चीन में स्थित नौकरशाही के जुल्म और भ्रष्टाचार को समाप्त करना चाहता है। वह राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन चाहता है। वॉग के मन में व्यवस्था के प्रति असंतोष है। वह व्यवस्था से आंदोलन करना चाहता है। परंतु असंतोष और आंदोलन से उनका देशप्रेम कभी कम नहीं होता। वह चीन की प्राचीन संस्कृति पर गर्व करता है।

देशप्रेमी वॉग और उनके विद्यार्थी मित्रों द्वारा किये गए आंदोलन को चीन की मदमस्त सरकार एक अलग रंग देती है। छात्रों को डकैत खूँखार अपराधी करार देती है। अनुशासित रूप में बच्चों द्वारा निकाले जुलूस पर अपनी सबसे खूनी और खतरनाक सैनिक टुकडी '27 वी बटालियन' से गोलियों की बौछार करती है। निरपराध छात्रों पर टैंक चलाती है।

चीन की सरकार बच्चों के साथ ऐसा क्रूर खेल खेलकर तियेनमैन स्क्वायर में खून की नदी बहाती है। साथ ही घटित घटना के लिए बच्चों को जिम्मेदार मान व्यवस्था बचाने के लिए ऐसा क्रूर कदम उठाने की बात करती है। लेकिन सच बात तो यह है कि, देंग और माओं के आपसी संघर्ष का परिणाम बच्चों को भुगतना पड़ता है। वे समस्त छात्र चीन में स्थित भ्रष्टाचार का अंत, नेताओं का बैंक अकाऊंट, सत्ता की निरंकुशता के प्रति घृणा आदि की पोल खोलकर वैचारिक स्वतंत्रता को लाना चाहते हैं। परंतु चीन की तानाशाही सरकार बच्चों के खिलाफ झूठी साजिश रचकर उन्हें समाप्त कर देती है।

प्रभा जी छात्र क्रांति के साथ-साथ इस उपन्यास में आइवी के संघर्षमय जीवन की झाँकी भी प्रस्तुत करना चाहती हैं। आइवी एक मामूली किसान की बेटी है जो अपने देश से बेहद प्यार करती है। फलस्वरूप वह अपने बेटे वॉग को बीजिंग विश्वविद्यालय में पढ़ने भेजती है।

चीन सरकार की तियेनमैन स्कवायर में चलाई गोली आइवी की कोख पर भी चलती है। उसका बेटा वॉग भी इसमें मारा जाता है। आइवी अपने पति से तलाक लेकर, चीन की तानाशाही नीति से तंग आकर तथा भ्रष्टाचार, घूसखोरी, राष्ट्रविरोधी काम और गरीब मजदूरों का आर्थिक शोषण देखकर हाँगकाँग भाग जाती है। वहाँ आरंभ में टैक्सी चलाकर अपनी उपजीविका चलाती है। बाद में आलफर्ड शिव की सेक्रेटरी बनकर व्यवसाय में सक्रिय होती है। अपनी अक्लमंदी और ईमानदारी की बदौलत ब्रांच मॅनेजर की अफरा-तफरी की खबर कंपनी के मालिक एरी डिक्रे को देकर कंपनी की ब्रांच मॅनेजर बन जाती है।

प्रभा जी आइवी को एक ऐसी औरत के रूप में प्रस्तुत करती है जो सनकी जरूर है मगर बेहद ईमानदार है। वह चीन में आर्थिक प्रगति लाकर सच्चे समाजवाद की स्थापना करना चाहती है। वह भूख, गरीबी और मार्क्सिज्म के नाम पर नौकरशाही का बढ़ता जुल्म और बढ़ता भ्रष्टाचार देखकर परेशान होती है। उसे गोरी चमड़ी का चीन में आना काफी खटकता है। वह हांगकांग की पूंजीवादी मनोवृत्ति और चीन की एक दृढ़ कम्युनिस्ट अवधारणा जैसी अलग-अलग दो धाराओं को मिलाकर एक

विकास की धारा बनाना चाहती है। माओवादी विचारों से प्रभावित आइवी वर्तमान पर ज्यादा भरोसा करती है। वह सत्ता को एक फूला हुआ गुब्बारा मानती है, जिसमें जनता के फेफड़ों की हवा भरी होती है, जिसमें सुई चुभाते ही सारी हवा निकल जाती है।

प्रभा जी ने उपन्यास में आइवी के माध्यम से वैश्विक धरातल पर चीनी स्त्री के संघर्ष को मुखर किया है। उसके आत्मसम्मान और स्वाभिमान को पाठकों के सामने रखकर वह यह बताना चाहती है कि, स्त्री में दैवी शक्ति होती है। यदि वह कुछ करने की ठान ले तो फिर वह मारवाड़ी समाज की स्त्री हो या चीनी परिवार की मामूली किसान की बेटी आइवी हो, वह सफलता के परचम को जरूर लहराती है। मार्ग में आनेवाली तमाम बाधाओं को मिटाकर वह अपनी महत्वाकांक्षाओं को साकार कर सकती है।

'अग्निसंभवा' को पढ़कर गागर में सागर भरनेवाली कहावत का स्मरण हो आता है। अड़तीस पृष्ठों में सिमटा हुआ यह लघु उपन्यास जीवन के विस्तृत पहलुओं को उजागर करता है। किसी देश विशेष की राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक स्थितियों के साथ-साथ इंसान के जीवन संघर्ष को व्यक्त करती हुई इसकी कथावस्तु में स्त्री के संघर्ष और किसान की दशा को पाठकों के सामने रखने का सफल प्रयास है।

2.1.4 एड्स-

'एड्स' सन् 1993 में वाराणसी से 'आज' पूजा समाचार पत्र के दीपावली विशेषांक में प्रकाशित उपन्यास है। इक्कीस पृष्ठों में प्रभा जी ने प्रभा, कुक्कू, पेट्रिशिया, एण्डू स्पेन्सर आदि पात्रों द्वारा इस लघु उपन्यास को विदेशी परिवेश के कथ्य में बाँधा है। डॉ. अशोक मराठे जी के अनुसार- "पढ़ने के बाद इसे बड़ी कहानी ही कहा जा सकता है।"[18] इसमें सात दिनों में विदेश की धरती में आए ढेर सारे अनुभव और दिल में दरार लिए जीते हुए इंसानों के दर्द को उजागर करने के साथ-साथ पश्चिमी देशों के टूटते-बिखरते परिवार और आपसी अविश्वास की मजबूत होती नींव का चित्रण है।

'एड्स' जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इसमें समसामायिक प्रश्न उभरता है। आज वैश्विक स्तर पर इस भंयकर लाईलाज बीमारी ने डर का माहौल निर्माण किया है। यह बीमारी मानव शरीर में प्रवेश कर उसे खत्म करके ही दम लेती है। इसके कारण दांपत्य जीवन के संबंधों में दरारें निर्माण हुई है। इसे लेकर प्रभा जी लिखती है- "फ्री सेक्स की अवधारणा एड्स जैसी भयानक बीमारियों के भय से उन पश्चिमी देशों से भी रफा-दफा हो चुकी हैं, जहाँ वे अपने आपको पूरी तरह स्वतंत्र मानते रहे हैं।"[19]

'एड्स' कहानी की कथावस्तु प्रभा के हवाई जहाज के सफर से शुरू होती है और हवाई जहाज के सफर पर खत्म हो जाती है। प्रभा दिल्ली से अपना सफर शुरू करती है और इस सफर में उसके साथवाली सीट पर एक अमेरिकन पुरुष बैठा होता है। आठ घंटे की यात्रा में दो अजनबियों का बोलना स्वाभाविक होता है, वह पुरुष बात शुरू करता है और दोनों में साधारण परिचयात्मक बातें होती है। इन साधारण बातों में भी व्यक्ति के मन की गहराइयों में दु:ख की लहरें उठती हुई महसूस होती हैं। जर्मनी के फ्रॅंकफर्ट शहर से दोनों की यात्रा दिशाएँ बदल जाती है। प्रभा मिलान आ जाती है और व्यापार के अनेक कामों को निपटकर वह तीसरे दिन वहाँ से फ्रांस के लिए रवाना हो जाती है। सन् 1990 खाडी युद्ध की समाप्ति का समय है। इस युद्ध के कारण तनाव और हिंसा का माहौल बना हुआ था। सद्दाम को खत्म कर अमरिका अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहता था। प्रभा जी युद्ध का समर्थन नहीं करती। उसकी निगाह में बुश और सद्दाम दोनों एक जैसे हैं। वह केवल साधारण व्यक्ति की चिंता करती है। हुसैन और बुश दोनों को आम आदमी पसंद नहीं करता क्योंकि आम आदमी कभी नहीं चाहता कि राष्ट्र की सीमाओं के भीतर-बाहर कहीं भी युद्ध हो। एक देश में हो रहा युद्ध सारे विश्व को किसी न किसी प्रकार से प्रभावित करता है। आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक ढाँचे की जड़ें हिलने लगती है। युद्ध में गए सैनिक के अभिभावक चिंता की आग में झुलसते रहते हैं। साथ ही लेखिका इस उपन्यास में अमरिका और जर्मनी की व्यापार नीति की पोल खोलना चाहती है। खाड़ी युद्ध का बहाना बनाकर अमरिका व्यापार को मंदा बताता है। लेकिन वास्तविकता

क्या है इस पर प्रभा जी कोटेश्वरराव के कथन से प्रकाश डालती है। राव कहते हैं- "उतना मन्दा नहीं जितना आपका जर्मन या अमरीकन कह रहा है। अच्छा बताइये तो आप इस जर्मन को कब छोडेंगी? आप जैसी पढ़ी-लिखी महिलाएं भी इनकी दोगली चाल नहीं समझती ?"[20] प्रभा जी अमरिका की व्यापार नीति को अच्छी तरह जानती है। वह कहती है- "तुम चाहे अमेरिकन हो या जर्मन, तुम सब एक हो। वह गोरी चमड़ीवाले । लुटेरे दुनिया को दहलाकर रख दिया। तुम्हें अपने लिए सब कुछ चाहिए। तुम इस धरती की पचहत्तर प्रतिशत ऊर्जा खा जाते हो और उर्जा की बचत कैसे की जाय, हमें, हमारे जैसे गरीब देशों को सिखाने चले आते हो।"[21] प्रभा जी ने इसमें राजनीतिक वर्णन के साथ-साथ पति-पत्नी के बीच बढ़ती दूरियाँ, परिवार विघटन की समस्या पर भी प्रकाश डाला है।

पेरिस में हैम्प और पेट्रा भी प्रभा के साथ हो जाते है। पेरिस में व्यापार के मामले में माथा पच्ची के बाद प्रभा को कुक्कू जबरदस्ती आर्ट गैलरी दिखाने ले जाती है। इसी बीच प्रभा की मुलाकात हवाई जहाज वाले आठ घंटे के हमसफर- एण्डू स्पेन्सर से होती है। वह प्रभा के सामने अपने दर्द की परतें उधेड़ने लगता है। उसकी पत्नी को एड्स है और जो उसके दोस्त से शारीरिक संबंध बनाने के कारण तोहफे में मिली है। एण्डू के पैरों के नीचे से जमीन खिसक जाती है। वह पत्नी की बेवफाई को माफ कर नियमित रूप से पत्नी को मिलने अस्पताल जाता है। पत्नी की बेवफाई को लेकर वह प्रभा जी से कहता है- "तुम जरा सोचकर देखो मैं बीस वर्ष से किसी को प्यार करता रहा और मुझे यह पता भी नहीं चला कि कोई मुझे धोखा दे रहा है कि वह मेरे दोस्त से उलझी हुई है।"[22] वैसे अकेलापन दुनिया की सबसे गैरजरूरी चीज है। फिर भी वह रात-दिन एक दहशत और आतंक से पागल रहता है कि, कहीं उसके भीतर भी एड्स के कीटाणू तो नहीं है ? वह अकेला हो गया है, उसका अकेलापन उसे काटता है। एण्डू की जिंदगी के दिन तेज बारीश में जंगली फूलों की तरह बहते जा रहे हैं। वह प्रभा से कहता है- "दुनिया की सबसे गैरजरूरी चीज है आदमी का अकेलापन, वह चक्का जो घूमते हुए भी कोई यात्रा पूरी नहीं करता कहीं ठहर नहीं पाता न किसी आदमी से जुड़ पाता है और कौन किसी की आवाज सुनता

है। भीतर की सिसकी, फूटती हुई रूलाई, पलकों पर ठहरा हुआ आंसू होटल के अकेले कमरे की सूनी दीवारें वहां होकर भी नहीं होती।"[23] उसके मन में एड्स बीमारी को लेकर एक खौफ है। वह लेखिका से कहता है- "मेरा कोई स्थायी घर नहीं। मैं अपना असली नाम नहीं बताना चाहता। मैं प्रायः नाम बदलता रहता हूं, ताकि कोई मुझे न पहचाने। मेरी पत्नी एड्स की मरीज है। मैं खुद इस दहशत में भागता रहता हूं कि कहीं मुझे एड्स न हो जाये।"[24]

आपसी कलह के कारण अमरिकी दांपत्य जीवन टूटने की कगार पर आ गया है। श्वार्ज की पत्नी कुक्कू पिछले दस वर्षों से बार-बार पति को छोड़ने की धमकी दे रही है। उसी तरह पेट्रिशिया भी अपने पति के व्यापार और व्यवहार से परेशान है। उसे वह चिप्पू लगता है। वह हैम्प से पिंड छुड़ाना चाहती है। उसका मातृत्व अब सूखने लगा है।

'एड्स' उपन्यास में प्रभा जी ने वैश्विक स्तर पर चलनेवाली स्पर्धा, एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र पर वर्चस्व, युद्ध के कारण व्यापार जगत में निर्मित समस्या, एड्स की लपेट में आया समाज, उससे उत्पन्न पारिवारिक कलह, पति-पत्नी के बीच की दूरियाँ, परिवार विघटन की समस्या और नारी को व्यापार करते समय आनेवाली अनेक समस्याएँ आदि को चित्रित किया है।

2.1.5 छिन्नमस्ता-

'छिन्नमस्ता' यह सन् 1993 में राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली से प्रकाशित उपन्यास है। 224 पृष्ठों में प्रभा खेतान ने प्रिया, नरेंद्र, मि.अग्रवाल, अजय, विजय, नीना, जुड़ी, कस्तुरीदेवी, दाई माँ, तिलोत्तमा, सरोज आदि पात्रों को लेकर इसके कथानक को साकार किया है। उनका यह उपन्यास मारवाड़ी परिवार की बहू 'प्रिया' की यातना विद्रोह और अस्तित्वबोध को अभिव्यक्त करता है। इसमें नारी शोषण के चक्रव्यूह को छेदकर नारी अस्मिता और वेदना को प्रिया के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। प्रिया का विद्रोह एक या दो साल में घटीत घटनाओं का परिणाम नहीं है। बचपन से लेकर वैवाहिक जीवन तक घटी घटनाओं की यह

प्रतिक्रिया है। जो प्रिया को सभी संबंधों को नकारकर अपने आपको मुक्त करके अपने अलग व्यक्तित्व को निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

उपन्यास के आरंभ में अड़तालीस वर्षीय प्रिया अपने चमड़े के व्यवसाय के सिलसिले में विदेश में कोई प्रदर्शनी लगाकर कलकत्ता लौट रही थी। बेलग्रेड हवाई अड्डे पर उसकी तबीयत खराब होने के कारण अस्पताल में भर्ती किया जाता है। उसका दोस्त फिलिप उसे विश्राम हेतु उसकी व्यवस्था वहीं एक होटल में करता है। उसका अतीत इस होटल में भी पीछा नहीं छोड़ता। उसे अपना अतीत नये सिरे से याद आता है।

बचपन से ही प्रिया के जीवन में यातनाओं का दौर चल पड़ा है। उसे परिवार के सभी सदस्यों द्वारा सताया जाता है। उसकी माँ उसे भाटा, पत्थर, बोकी, गधी, भंगन जैसी कई उपाधियों से विभूषित करती है। हर समय, हर पल, हर मोड़ पर घर में तथा बाहर सताई जानेवाली प्रिया के शारीरिक तथा मानसिक शोषण की कहानी उसके परिवार से ही शुरू होती है। घर का प्रमुख सदस्य उसका बड़ा भाई विजय उसका यौन शोषण करता है। जिसका पता उसकी आश्रय सहारा दाई माँ के सिवा अन्य किसी को नहीं है। बचपन में बड़े भैय्या की वासनाओं की शिकार रही प्रिया जवानी में प्रो.मुखर्जी द्वारा ठगी जाती है। इस घटना से प्रिया के विचारों में परिवर्तन आ जाता है। वह सोचती है- "मुझे नफरत है इस पुरुष जाति से। नफरत है उससे जो मासूम, छोटी, नादान लड़की को भी नहीं छोड़ता। अब मुझे समझ में आता है कि हर समाज में इनसेस्ट प्रेम पर इतना भयानक टैबू क्यों है? क्यों सहज प्रकृति का मृत्यु-धर्म इनसेस्ट प्रेम पर लागू होता है। नहीं तो जन्म से औरत... असहाय औरत। उसे न पिता छोड़ता है और न भाई।अपनी नारी देह में स्वयं में क्षत-विक्षत होकर रह जाती है। वह कभी किसी पराए पुरुष को प्यार नहीं कर पाती।"[25] प्रेम के बारे में प्रिया सोचती है - "मुझे प्रेम, सेक्स, विवाह, ये सारे सदियों पुराने घिसे हुए शब्द लगने लगे थे.... इन शब्दों के पीछे की दीवानगी और आदिकाल से चली आ रही परम्पराओं का चेहरा सिर्फ औरत के आँसुओं से तरबतर है।"[26] 22 साल की उम्र में उसकी शादी करोड़पति नरेंद्र से होती है, परंतु पति के संदर्भ में जो उसके ख्याब थे वह

चकनाचूर हो जाते है। नरेंद्र उसे वहशी जानवर-सा प्रतीत होता है। वह प्रिया को केवल भोग्य वस्तु मानता है उस पर अपना अधिकार जताता है।

प्रिया आरंभ में नरेंद्र से शादी कर घरेलू औरत के रूप में जीवन जीती है। पापा की दूसरी पत्नी तिलोत्तमा और बेटी नीना की जानकारी उसे मिलती है। प्रिया चुपके से उनसे मिलती है। उसका उन्हें मिलना नरेंद्र को अच्छा नहीं लगता वह उस पर गुस्सा होता है। लेकिन प्रिया छोटी माँ और नीना से काफी प्रभावित होती है। उनसे कम समय में घुल-मिल जाती है। कुछ साल बाद वह मन बहलाने के लिए नरेंद्र के कहने पर काम शुरू करती है। परंतु यही काम उसके लिए एक जीवन शक्ति बन जाता है। एक जगह प्रिया कहती है- "आज मेरा व्यवसाय मेरी आइडेंटिटी है। यह आए दिन की विदेशों की उड़ान.. यह मेरी जिन्दगी के कैनवास को बड़ा करती है। नित्य नए लोगों से मिलना-जुलना, जीवन के कार्य-जगत को समझना। मुझे जिन्दगी उद्देश्यहीन नहीं लगती।"[27] वह अपने व्यवसाय के कारण स्वतंत्र एवं आर्थिक रूप में स्वावलंबी बनकर जिंदगी की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार होती है। प्रिया का निरंतर भ्रमण और युरोप की यात्रा नरेंद्र को अच्छी नहीं लगती। प्रिया का बढ़ता व्यापार, उसका स्वावलंबी बनना नरेंद्र के अहं को ठेस पहुँचाता है। वह कठोर शब्दों में कहता है- "दर असल तुम्हें इतनी खुली छूट देने की गलती मेरी ही थी। मुझे पहले ही चिड़िया के पंख काट डालने चाहिए थे।"[28] व्यवसाय को लेकर नरेंद्र और प्रिया के दांपत्य जीवन में तनाव निर्माण होता है। नरेंद्र अपनी संपत्ति के बल पर घर तथा बेटे को छिन लेता है। पुरुष प्रधान संस्कृति का प्रतिनिधित्व करनेवाला नरेंद्र नारी को निरंतर दबाये रखना चाहता है। वह प्रिया को अपमानित करते हुए कहता है- "तुम कमीनी औरत.... तुम अपने-आपको बड़ी समझदार और पढ़ी-लिखी मानती हो !.... जाओ मरो, जहाँ जाना है, चली जाओ पर मुझे मुँह मत दिखाना, कभी नहीं।"[29] परंतु प्रिया महत्वाकांक्षी नारी है जो पुरुषों की बिछाई सारी बाधाओं को पार करती हुई प्रगति की सीढ़ियाँ चढ़ती है और नई उपलब्धियों को प्राप्त करती हैं। वह किसी रूकावट को न मानकर प्यार को ही परे हटाकर आगे बढ़ती है। इस वजह से उसका मन विचलित तो होता है, पर वह

सोचती है - "मेरे संस्कार अलग हैं। मैं संजू के सहारे जिन्दगी नहीं बिता सकती। न ही पति या बेटा या प्रेम ही जिंदगी के सहारे हो सकते है। इनके साथ-साथ चलते हुए कठिन मुकामों को पार करने में आसानी जरूर होती है, राहत मिलती है, मन को सुकून होता है कि चलो कोई साथ है। लेकिन यदि वे साथ न दें तब क्या एकतरफा आहुति भी देते चलो और सफर भी तय करो ? मैंने अपने मन को समझा लिया था। चलो, थोड़ी और कठिनाई सही। अपनी राह चल रही हूँ, इसका तो सन्तोष रहेगा।"[30]

लेखिका ने प्रिया के माध्यम से यह बताया है कि, सम्मान कोई देता नहीं उसे खुद ही प्राप्त करना पड़ता है। इसलिए वह अपना व्यापार स्थापित करती है। उसके इस कार्य में उसे नीना, छोटी माँ, दाई माँ और फिलीप का साथ मिलता है। उसका अकेलापन उसे जीवन का अर्थ समझाता है। वह जिंदगी को झेलती नहीं, बल्कि हँसते हुए जीती है। प्रिया को कभी अपनों से प्यार नहीं मिल पाया। एक जगह खुद वह यह बात स्वीकार करते हुए कहती है- "मैं आखिर किसकी बेटी हूँ, मेरी समझ में नहीं आता ! माँ के बदले दाई माँ ने पाला और सास के बदले छोटी माँ ने सम्हाला।"[31]

इस प्रकार प्रभा खेतान ने 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में मारवाड़ी घर में जन्मी लड़की के जीवन की त्रासदी एवं विवाहित महिला के जीवन संघर्ष का यथार्थ चित्रण किया है।

2.1.6 पीली आंधी-

'पीली आंधी' यह प्रभा खेतान का सन् 1996 में लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित बहुचर्चित उपन्यास है। 299 पृष्ठों में प्रभा जी ने माधो, पद्मावती, पन्नालाल एवं सोमा के जीवन-संघर्ष, आदर्श एवं उनके जीवन के मूल्य बोध आदि को उजागर किया है। "पीली आंधी" उपन्यास में एक ओर जहाँ पलायन की त्रासदी तथा महानगरीय समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है, वहीं दूसरी ओर महानगरीय परिवेश में पीढ़ी-दर-पीढ़ी होने वाले मानसिक, वैचारिक तथा भावनात्मक परिवर्तनों को भी कुशलतापूर्वक व्यक्त किया गया है।"[32] मारवाड़ियों का जीवन संघर्ष इस उपन्यास का मुख्य विषय है। वे जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हुए आगे बढ़ रहे हैं। अकाल तथा क्रूर शासकों के शोषण के कारण देश से

पलायन करनेवाले मारवाड़ियों के जीवन की दास्तान इसमें व्यक्त हुई है। कथावस्तु की शुरूवात राजस्थान की सोने-सी चमकती मिट्टी से शुरू होकर बंगाल के संपन्न मारवाड़ी समाज में जाकर पूर्ण होती है।

सुजानगढ़ में पानी के कारण सबकी स्थिति दयनीय थी। अकाल का वर्णन करते हुए बताया गया है - "बीणनी पानी तो कहीं नहीं है। ढोर-डांगर तड़फड़ा रहे हैं, प्यासी धरती की छाती फटी जा रही है। कैसा तावड़ा तपता है कि आंख नहीं खुलती और आकाश से तो लाय बरस रही हैं लाय ! यह गांव सुजानगढ़ है भी ऐसा।"[33] सुजानगढ़ में सेठ गुरमुखराय रूंगटा अपने परिवार के साथ रह रहा है। उसके दोनों बेटे रामेश्वर व किशन कमाने के लिए दिसावरी जाते हैं। मारवाडियों को दिसावरी जाना आवश्यक था। उनके दिसावरी जाने की वजह से घरवालों को दुख होता है। शादी के दस दिन बाद ही किशन दिसावरी चला जाता है। सास बताती है- "कमाई के लिए जाना ही पड़ता। कोई उपाय भी तो नहीं।.... तीन-तीन बरस की लंबी दिसावरी। पति-पत्नी साथ रहें तब ना बच्चे हों।"[34] सुजानगढ़ के सामंत रतनसिंह और अंग्रेज जनता का दोहरा शोषण कर रहे है। राजा रतनसिंह जी गुरमुख राय जी के बेटों से तरह-तरह की फर्माइशें करते हैं। वे कहते हैं- "गुरमुख रायजी, रामेश्वर और किशन से कहकर शंघाई की जार्जेट मंगवा दीजिए। सिलक के कुर्ते का थान चाहिए, फ्रांस की ब्रोकेट चाहिए। और एक हजार अशर्फी की जरूरत पड़ेगी। हम लोग तो आप बाणिये से ही धन मांग सकते है। गांव में अकाल पड़ा है। कंपनी सरकार को नजराना भेजना होगा। हम किससे मांगने जाएं?"[35] सालों बाद लौटते समय छोटे बेटे किशन का दोस्त कंवर मानसिंह उन्हें लूटकर रामेश्वर की हत्या कर देता है। किशन आहत होकर अपना घर-गाँव एवं बिलखता हुआ परिवार छोड़कर बंगाल की ओर हमेशा के लिए पलायन करता है। किशन के संबंध में डॉ. अनसूया अग्रवाल लिखती है, "किशन नामक मारवाड़ी युवक अपनी पत्नी, पुत्र एवं भतीजे को साथ लेकर राजस्थान के ग्रामीण परिवेश से निकलकर कलकत्ता के महानगरीय परिवेश में पहुँचता है जहाँ उन्हें नित नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।"[36]

सफर में उसे सहयात्री मिलता है जो अपनी रोटी किशन के परिवार वालों के साथ मिल जुलकर खाने को कहता है। किशन धनबाद में लाला बिसेसरलाल की सहायता से कपड़े का धंधा शुरू करता है। रामेश्वर का बेटा माधो चाचा का हाथ बंटाते हुए क्रांतिकारी शील बाबू के संपर्क में आता है। वह अंग्रेजों के कोप का भाजन बनता है। माधो को किशन कोलकत्ता म्हालीराम के पास गद्दी पर काम करने भेजता है। तेज दिमागवाला माधो जीवन को उद्देश्य देना चाहता है। किशन का धंदा मंदा होने पर वह भी कलकत्ता आ जाता है। ज्यादा पैसे पाने की लालच में किशन को बुरी लत लग जाती है। जिससे वह कर्ज में डूब जाता है। वह मानसिक संतुलन खोकर मर जाता है। माधो पुरानी यादों के बीच घुटन में जी रहा है। बीमार लड़की से विवाह होने के कारण उसकी गृहस्थी असफल साबित होती है। दुनिया के तानों के बीच भी माधो भविष्य के सपने बुनता है। एक दिन किस्मत के जोर पर वह कोलियारी के लिए जमीन का पट्टा खरीद लेता है। झरिया में ओझाजी के साथ उसकी मेहनत रंग लाती है। सारी चिंताओं और समस्याओं को परे ढकेलकर वह आगे बढ़ता जाता है।

एक दिन दुर्घटना में उसकी बीमार निर्दोष पत्नी की मृत्यु हो जाती है। जिससे वह आहत हो जाता है। धन के बीच भी खुद को तन्हा महसूस करता है। चुरू में मनसुखदास की बेटी से विवाह करता है। उसके रूप सौंदर्य को देखकर माधो उसका नाम पद्मावती रखता है। उसके सौंदर्य को देखकर राधाबाई के तन-बदन में आग लग जाती है। उसके कलेजे में ईर्ष्या की कटार चुभने लगती है। वह मन-ही-मन सोचती है- "ऐसी रूपवती बीनणी? अरे ऐसा रूप तो झरोखे से झांके तो चील झपटकर ले जाए। बोलती है तो मानो कोयल टुहका लेने लगती है। यह तो सुरग की अपसरा है। इसके कामण जादू से तो कोई बच नहीं सकता। घर में यह अब किसी की क्या चलने देगी।"[37] पद्मावती घर और देवर के बच्चों को अच्छे ढ़ंग से संभाल लेती है। राधाबाई के देहांत के बाद सांवर को गलत रास्ते पर जाता देख माधो दुखी होता है। वह सुराणा जी को सारी जिम्मेदारी सौंपकर ब्लड् कैंसर से मर जाता है। सुराणा जी की देखभाल और पद्मावती की आत्मीयता प्यार में बदल जाती है, मगर दोनों अपनी मर्यादा की देहलीज पार नहीं कर पाते। सांवर गुंडों के हाथों सुराणा जी

को खत्म करता है। उसकी पत्नी निमलीबाई और दोनों बच्चों की जिम्मेदारी पद्मावती उठाती हैं। साथ ही देवर-देवरानी की मृत्यु के पश्चात उनके बच्चों को अनुशासन में सही शिक्षा देकर बड़ा करती है।

पद्मावती सांवर के छोटे बेटे गौतम की शादी सोमा से करती है। गौतम उसकी शारीरिक जरूरत और बच्चे की चाहत पूरी नहीं कर पाता। वह अपने मन को बहलाने के लिए आगे पढ़ने की इच्छा जाहिर करती है। सोमा को पढ़ाने हेतु घर पर प्रो.सुजीत सेन आता है। सोमा उसके प्यार में पागल हो जाती है। वह सुजीत सेन से अपनी चाह पूरी करती है। क्योंकि वह तड़प रही थी। उसका मन बार-बार पुकार कर कह रहा है- "आह ! मैं किससे कहूं? किससे कहूं कि मुझे बच्चा चाहिए? एक प्यारा-सा गुदाज बच्चा, सृष्टि की प्यारी महत रचना।"[38] परिवार वाले उसे घर से निकाल देते है। सुजीत की पत्नी चित्रा सोमा का स्वीकार कर लेती है। उसे आत्मनिर्भर बनाकर उसके बच्चे को गोद लेकर अपना नाम देकर घर छोड़कर चली जाती है।

सोमा सुजीत और अपने बच्चे के साथ सुखी जीवन बिताती है। घरवाले सोमा से नफरत करते हैं। पद्मावती अंत तक उसे अपना ही मानती है। अपना सब कुछ वह सोमा के नाम कर देती है। सोमा के हाथ से ही वह अंतिम बार जल ग्रहण करती है। सोमा पद्मावती से मिली सारी चीजें वहीं छोड़ देती है। सिर्फ कोयले की टोकरी और कपड़े में बंधी गीता लेकर सुजीत के घर वापस आती है। जब वह कपड़े में बंधी हुई गीता खोलती है तो उसे पता चलता है कि यह सुराणा की लिखी डायरी है। जिसे पढ़कर उसे ताईजी और सुराणा जी के बीच के प्यार के रिश्ते का पता चलता है।

हिंदी उपन्यास में राजस्थान के मारवाड़ी समाज की व्यथा की कथा प्रस्तुत करनेवाला यह कदाचित पहला उपन्यास है। मारवाड़ी समाज के दर्द, उनका अपनी जमीन से कट जाने का दु:ख, जी-तोड़ परिश्रम आदि का प्रभा खेतान ने अत्यंत प्रामाणिकता के साथ चित्रण किया है। उन्होंने इसके कथानक में अम्मा, ताई और चाची को लेकर अपनी जड़ों को खंगालने का प्रयास किया है। उन्होंने विशिष्ट लेखकीय साहस के साथ स्त्री की सिर्फ बाहरी नहीं, उसकी निहायत निजी आंतरिक और गोपनीय परतों को भी खोलने का काम किया है। इस उपन्यास में तीन पीढ़ियों

की औरतें है, जो डेढ़ सौ साल की यात्रा करते हुए अपने संघर्षमय जीवन को प्रस्तुत करती है।

इस प्रकार 'पीली आंधी' यह उपन्यास प्रभा जी का मारवाड़ी समाज के चित्रण के साथ-साथ नारी जीवन की दयनीय स्थिति को भी व्यक्त करता है। इसमें सबसे पहले पति के दिसावरी जाने पर वियोग में तड़पने वाली पत्नी राधाबाई का दर्द है। रामेश्वर की मृत्यु के बाद बीमारी की वजह से मरने वाली उसकी पत्नी का दर्द है। मिरगी की बीमारी होनेवाली माधो की पत्नी का दर्द है। पति की मेहनत देख परेशान होनेवाली, देवर के बच्चों को अपना मानकर उनका पालन-पोषण करनेवाली, अपने प्यार का त्याग करनेवाली पद्मावती का दर्द है तो अंत में पति से प्यार न पाकर दूसरे से प्यार की चाहत रखनेवाली सोमा का भी दर्द व्यक्त हुआ है। प्रभा जी का यह उपन्यास मारवाड़ी समाज की व्यापार नीति के दर्शन कराने के साथ गरीबी से लड़ना सिखाता है। साथ ही समय के साथ चलने की भी सलाह देता है। मनुष्य को नियति के साथ समझौता करना चाहिए। यह सीख प्रभा जी इस उपन्यास के माध्यम से देती है। यह प्रभा खेतान का उल्लेखनीय उपन्यास है।

2.1.7 अपने-अपने चेहरे-

'अपने-अपने चेहरे' यह प्रभा जी का सन् 1996 में 'किताबघर', नई दिल्ली से प्रकाशित केवल 216 पृष्ठों का उपन्यास है। इसमें संपन्न मारवाड़ी परिवारों के आंतरिक कलह, आदमी के भीतर के तनाव और बाहरी स्तर पर सबकुछ ठीक-ठाक है इस प्रकार के दिखावे का पर्दाफाश किया गया है। एक सामान्य कहानी, जो आज अनेक घरों में घटित होती रहती है। संपन्न घरों में स्त्री की स्थिति और एक ही छत के नीचे रहनेवाले परिवार के सदस्य, जो एक-दूसरे से कटे हुए होते है परंतु बाहर से एक होने का दिखावा करते हैं, पीहर में बेटी को पराया धन समझना और ससुराल में उसे पराई समझना हमारे समाज की परंपरा रही है। स्त्री को लेकर प्रभा जी के मन में जो प्रश्न है वह इस उपन्यास में गहरी संवेदनशीलता के साथ व्यक्त हुए है। प्रभा जी का यह उपन्यास विवाह, पति, बच्चे आदि से हटकर भी स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व है यह बताने की कोशिश करता है। साथ ही यह दूसरी औरत की पीड़ा, उसका

अंर्तद्वंद्व आदि के भी दर्शन कराता है। डॉ. अशोक मराठे के अनुसार- "प्रभा जी ने अपने वास्तविक जीवन में दूसरी औरत की पीड़ा को सहा है। उनकी वही पीड़ा कथावस्तु बनकर यहाँ हमारे सामने आयी है।"[39]

इस उपन्यास की कथा उपन्यास की नायिका को बार-बार दूसरी औरत होने की पीड़ा से रूलाती है। उपन्यास की नायिका रमा विवाहित और तीन बच्चों वाले पुरुष राजेंद्र गोयनका से प्यार करती है। दोनों में अठारह साल का अंतर है। राजेंद्र डरपोक इंसान है। समाज के डर से वह ना तो बीवी को तलाक देता है और ना ही रमा से शादी करता है। रमा गोयनका के बच्चों की शिक्षक बनकर आती है परंतु गोयनका के प्यार के कारण उनके घर की संरक्षिका बनती है। बच्चों को संस्कार देती है। रमा पर मिसेज गोयनका को भी तरस आता है। मन्नो से बात करते हुए मिसेज गोयनका कहती है- "मैं गँवार औरत ठहरी। जन्म दिया पर शिक्षा तो रमा की मिली ना? कुछ भी कह मन्नो उसने मेरे लिए किया बहुत है। मुझे तो उस पर दया आती है। तुम्हीं बताओ, उसको क्या मिला? दुख ही पाती है ना? उसकी शादी तो देखो, इनसे हो नहीं सकती। समाज तो, अब तुम्हीं बताओं, ऐसे नाजायज सम्बन्धों को भला कैसे स्वीकारेगा।"[40] अपना अलग व्यवसाय स्थापित कर रमा गोयनका परिवार की सहायता भी करती है। परंतु राजेंद्र गोयनका उसे दोस्त बनाकर रखना चाहता है। लेकिन उनकी दोस्ती परंपरागत भारतीय समाज को मंजूर नहीं है। रमा भले ही मांग में सिंदूर सजा नहीं पाती लेकिन गोयनका परिवार के लिए वह सर्वस्व अर्पण करती है। गोयनका हाऊस के एक-एक कोने को वह अपने हाथों से सजाती है, लेकिन उसी गोयनका हाऊस में उसे डस्टबिन की तरह एक कोने में रख दिया जाता है। रमेश की शादी के सिलसिले में घर आए मेहमान मिसेज गोयनका की तारीफ करते हैं। रमा मन ही मन दुखी होती है। उसकी आंतरिक पीड़ा की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। रमा हारती है टूटती है तार-तार होती है, पर प्रेम का त्याग नहीं करती। इस उपन्यास में स्त्री को समाज में स्थान एवं सम्मान पाने हेतु आर्थिक रूप से स्वावलंबी होना आवश्यक है, यह लेखिका ने दर्शाया है।

प्रभा दूसरी औरत की पीड़ा से निजात पाने के लिए स्वयम् का व्यवसाय शुरू कर समाज में अपना स्थान निश्चित करती है। मिस्टर गोयनका के व्यवहार से नाराज हो जाती है। इतना ही नहीं दूसरी औरत के कारण पति का घर छोड़ आयी रीतू को भी वह कुछ काम करने की सलाह देती है। रमा रीतू को समाज की व्यवस्था और रीति-रिवाजों के बारे में समझाती है- "पुरुष की व्यवस्था ने हर गुनाह के लिए औरत को जिम्मेदार ठहराया है। जबकि गुनाह खुद पुरुष करता है। यह व्यवस्था उसने बनाई है। वह रीति-रिवाज, रिश्ते-नाते सब उसके खेल हैं। हम तो केवल बिसात में बिछी मोहरे मात्र हैं।"[41] परंतु दकियानूसी और असंवेदनशील परिवार की रीतू को ऐसा करने में थोड़ा समय लगता है। मि. गोयनका की पत्नी सरला दूसरी औरत का विरोध न कर मूक बनकर पीड़ा को सहती है। वह पीड़ा को सहन करने में ही भलाई समझती है। इसमें उसका खुद का स्वार्थ है। मिसेज गोयनका सोचती है- "कहीं सही-गलत हो गया तो बाद में पछताने से क्या होगा? और इतना बड़ा कारोबार ये अकेले सँभाल लेंगे? रमेश के तो दूध के दाँत भी नहीं टूटे। थोड़ा मुझे भी झुकना चाहिए।"[42] उसकी दृष्टि में चुटकी भर सिंदूर में बहुत बड़ा आत्मबल होता है। परंतु नई पीढ़ी की रीतू सहना नहीं चाहती, वह विरोध करती है।

रमा कभी मिस्टर गोयनका पर निर्भर नहीं रहीं। वह एक स्वावलंबी स्त्री है। अपनी माँ के घर रहती है लेकिन बाद में अपना घर बनाती है। जिसमें अपने सहयोगियों के साथ रहती है। समाज की असहाय और पीड़ित स्त्रियों को आगे बढ़ाना चाहती है। व्यापार के सिलसिले में मद्रास चली गई रमा जब वापस आती है तो मिस्टर गोयनका के निधन का समाचार मिलता है। रमा को सबकुछ खाली-खाली-सा महसूस होता है। टूटा हुआ दिल लिए रमा अपने साथ रीतू को लेकर घर वापस आती है। रीतू की आत्मनिर्भरता उसका लक्ष्य होता है।

यह उपन्यास स्त्री को अपनी जमीन तलाशने के लिए मार्ग निर्देशित करता है, साथ ही समाज की थोपी हुई कुंठाओं से उबरने की राह भी दिखाता है। उपन्यास में मारवाड़ी उद्योगपतियों के पारिवारिक जीवन की घुटन, उसके मानसिक पिछड़ेपन,

मध्यकालीन मानसिकता, मूल्यगत अन्तर्विरोध आदि का विश्वसनीय और सजीव अंकन किया गया है।

डॉ.अशोक मराठे जी के शब्दों में- "प्रभा जी ने इसमें दूसरी औरत की समस्या, उनकी आंतरिक घुटन, पीड़ा आदि के साथ-साथ मारवाड़ी समाज में स्थित नारी की व्यथा, वास्तविकता और पीड़ा को बड़ी मार्मिकता के साथ उद्‌घाटित किया है।"[43] प्रभा जी मानवीय रिश्तों के उलझन के साथ-साथ सामाजिक और पारिवारिक विशेषताओं के कारण उनका उपन्यास 'अपने-अपने चेहरे' बहुचर्चित रहा है।

2.1.8 स्त्री-पक्ष-

प्रभा जी का अंतिम उपन्यास 'स्त्री-पक्ष' सबरंग पत्रिका 'जनसत्ता' में 14 फरवरी 1999 से 1 अगस्त 1999 तक क्रमशः प्रकाशित हुआ है। उपन्यास में नायिका वृंदा के माध्यम से नारी जीवन की स्थिति और त्रासदी का चित्रण किया गया है। वृंदा के इर्द-गिर्द चक्कर काटता इस उपन्यास का कथ्य स्त्री की आत्मनिर्भरता के पक्ष में और पुरुष के अधिकारवाद के विरूद्‌ध आवाज उठाता है। प्रभा जी ने इस उपन्यास में आम घरेलू स्त्री के सूक्ष्म मानसिक उद्‌वेलन का चित्रण किया है। प्रभा जी के अन्य उपन्यास उच्च वर्ग अर्थात धनाढय वर्ग से उठाए गए है, मगर इस उपन्यास में आधुनिक परिवेश का मध्यमवर्गीय इन्सान अपने-आप में कैसे उलझा है ? अपनी आंतरिक समस्याओं से कैसे लड़ता है ? आदि का यथार्थ चित्रण है। यह पूर्णतया स्त्री के पक्ष को उठाने वाला उपन्यास है।

वृंदा के पिता एक व्यवसायी है और माँ एक साधारण गृहिणी जो अपने बच्चों की देखभाल और पति की सेवा में व्यस्त रहती है। उपन्यास के आरंभ में ही वृंदा के किशोर वय को उजागर किया है। बचपन में वृंदा के साथ नौकर गलत हरकत करता है। यह बात जब वह अपनी माँ को बताती है, तो माँ इन सब बातों के लिए वृंदा को ही दोष देती है। वह कहती है- "यदि औरत के साथ गलत घटता है तो इसके लिए वह औरत स्वयं जिम्मेदार है। औरत अपना पल्ला आप गिराती है।"[44] उसके मन में उठनेवाले उटपटांग सवाल वह अपने माँ से पूछती है। उसकी माँ उसे कभी डाँटती है तो कभी खामोश कर देती है। वृंदा अपने किशोर मन की उलझनों को सुलझाना

चाहती है और माँ से उत्तर न पाकर वह अधिक से अधिक किताबें पढ़ती है। वह बिना उद्देश्य जो किताब मिलती वह पढ़ डालती थी। उसने गुलशन नंदा, गांधी के साथ-साथ रजनीश की भी किताबे चट कर डाली थी। किताबों की कुछ बातें उसकी समझ में आती है कुछ अनसुलझी पहेली की तरह उसके मासूम दिमाग में सुइयां चुभांती रहती है। लेकिन इन किताबों को पढ़कर एक बात का उसे विश्वास हो गया था कि- "आदमी को अपने करम का फल मिलता हैं, भगवान नाम का कोई व्यक्ति है जो सबको देखता है और आदमी के सारे कर्मों का लेखा-जोखा रखा जाए तो हिसाब समझ में आ जाएगा।"[45] माता-पिता दो भाई-बहन का छोटा-सा परिवार, किसी भी भौतिक चीज की कमी नहीं पर वृंदा को कहीं खालीपन महसूस होता है। उसकी चाह थी - "वह अपने पिता के बेहद करीब आए, उनकी दोस्त बने, उनके सुख-दुख में उसका साझा हो। लेकिन पिता, भाई पर ज्यादा ध्यान देते थे.... वह निराश होकर अपने आप से कह बैठती- नहीं मुझे कोई प्यार नहीं करता।"[46]

तब वह पुरुष के सपने संजोती है। वह अपने सुखी जीवन के ख्वाबों की कल्पना करती है- "वृंदा एक पुरुष की कल्पना करने लगी जो सुंदर होगा, शिक्षित होगा, जो दुनिया की सब झंझट-आफत से उसकी रक्षा कर सकेगा। जिसके साथ वह दुनिया घूमेंगी और जो हमेशा-हमेशा उससे प्यार करेगा। उसका होकर रहेगा। वृंदा को पूरा विश्वास था कि ऐसा होगा, ऐसा जरूर घटेगा। वृंदा भी कभी अमीर होगी, स्वस्थ रहेगी.... बच्चों की मां बनेगी और हमेशा-हमेशा सुखी रहेगी।"[47]

वृंदा प्यार चाहती थी। वह स्पर्श सुख के लिए तरस रही थी। माता-पिता उसे कठोर अनुशासन में रखते है किसी भी पुरुष के सामने उसे आने नहीं देते। उसकी माँ का मानना है - "चरित्रहीन पुरुष की दृष्टि कुंवारी कन्या पर नहीं पड़नी चाहिए।"[48]

स्कूल की पढ़ाई खत्म कर जब वह कॉलेज में प्रवेश करती है तब अनीश नामक खानदानी परिवार के लड़के के साथ हुई वृंदा की दोस्ती से उसके माता-पिता निश्चिंत होते हैं। पर अनीश वृंदा को अपनी संपत्ति मानता है। वह उसके शरीर को पाना चाहता है। वृंदा बखूबी समझ रही थी। उसकी सारी समस्या देह से थी। अनीश

में उसके शरीर को पाने के लिए उसके कंवारे शरीर को भोगने के लिए एक जिद्दी अहंकार था। वृंदा अपनी मर्यादाओं से बाहर नहीं आती और उनके दोस्ती में दरार पड़ती हैं। ऐसी असहनीय उपेक्षा के कारण वृंदा नशा कर अपना संतुलन खो बैठती है। ऐसे नाजूक समय में जावेद उसे घर छोड़ आता है। गलती न होने पर भी कॉलेज में उसे बदनामी का सामना करना पड़ता है। अनीश वृंदा की उपेक्षा कर किसी अन्य लड़की के साथ घूमने लगता है।

अनीश के व्यवहार से वृंदा दुखी हो जाती है। औरत के निर्णय देह से संबंधित है। देह से बाहर औरत की कोई हस्ती नहीं है। यह मान कर वह अपने जीवन से समझौता करने के लिए तैयार हो जाती है। पिता के दोस्त के बेटे सुमित से उसकी शादी तय होती है। शादी के बाद कुछ दिन सबकुछ बड़ा अच्छा चलता है। वृंदा एक बेटा और बेटी की माँ बनती है। सुमित अच्छा डॉक्टर बन जाता है। वे अपनी खुशियों का आशियाना सजाते हैं। लेकिन देविका नामक अन्य स्त्री सुजित के जीवन में आने से दोनों के विवाहित जीवन में दरारें पड़ने लगती हैं। उसकी परिवार को जोड़कर रखने की सारी कोशिशें नाकामयाब साबित होती है। अंत में वृंदा बच्चों की परवरिश के लिए हर माह का खर्चा और फ्लैट में रहने की शर्तों पर तलाक पर हस्ताक्षर करती है।

वृंदा एक बुटिक खोल आत्मनिर्भर जीवन जीने लगती है। सबकुछ सामान्य चल रहा होता है, तभी वृंदा के जीवन में पच्चीस वर्षीय आर्जव प्यार की बहार लेकर आता है। पेंटर बेरोजगार आर्जव वृंदा के घर और बच्चों को बखूबी संभालता है। आर्जव के आने के बाद वृंदा की जिंदगी सहज होती है। उसमें आत्मविश्वास की आभा दिखाई देने लगती है। रचित वृंदा का बेटा पिता की दौलत के मोह में पिता के पास रहने लगता है। बेटी रिया वृंदा के साथ रहकर उसका हाथ बँटाती हैं। वृंदा अपने कारोबार में व्यस्त हो जाती है। वह आर्जव पर अपना मालिकाना हक महसूस करती है। आर्जव को जब मुंबई में बड़े काम का ऑफर मिलता है तो वह उसे साथ चलने को कहता है। भविष्य के बारे में सपने बुनने वाले आर्जव को देखकर वृंदा सोचती है- "वह आर्जव का भविष्य है, मेरा नहीं। आर्जव की महत्वाकांक्षा में मेरी हैसियत कितनी

मामूली है। मेरे बारे में आर्जव उसी तरह चिंता कर रहा है, जैसे आदमी किसी कमजोर पालतू जानवर के बारे में महसूस करता है और तो और, आर्जव कितने मामूली ढंग से सोच रहा है कि यदि वह ढेर सारे पैसे कमा लेगा तो एक भी काम करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।"[49] पर आत्मनिर्भरता से परिपक्व बनी वृंदा किसी पुरुष की सुरक्षा के चक्कर में फँसना नहीं चाहती। आर्जव उसके जीवन से चला जाता है। आर्जव के जाने के बाद वृंदा का मन बार-बार कहता है- "जीने के लिए केवल आर्जव का प्यार काफी नहीं कुछ और भी चाहिए.... और एक बार यदि मुंबई चली जाऊंगी तो यहां नहीं लौटूंगी। वापस ऐसी बुटिक नहीं बना सकती। कितने वर्ष तो यों ही बीत गए, बिना किसी उद्देश्य के, बिना किसी काम के यों नहीं जिया जाता, आर्जव मेरा उद्देश्य नहीं बन सकता।"[50] वह अपनी मेहनत और लगन से अपने पैसों से घर खरीदकर स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर जीवन जीने लगती है। उसे कभी पुरूष की कमी महसूस नहीं होती।

इस प्रकार पूरे उपन्यास में वृंदा का मानसिक उद्‌वेलन उभर कर आया है। वृंदा के जीवन के बारे में डॉ.कृष्णा जाखड़ कहती है- "वह अपनी उलझनों से बाहर नहीं निकल पाती। पति, बच्चे, घर इनसे अलग मानो उसका कोई जीवन ही नहीं। उसका मन जानना चाहता है कि आखिर स्त्री के जीवन की, सार्थकता कहां है और उपन्यास के अंत में उसकी यह तलाश पूरी हो जाती है।"[51] इस उपन्यास के जरिए प्रभा जी ने स्त्री का संघर्ष, उसका आत्मबोध, उसकी पीड़ा, कमजोरी निर्णयात्मक क्षमता को अभिव्यक्त किया है। किशोर होती लड़की से लेकर परिपक्व और आत्मनिर्भर स्त्री तक के सफर को प्रभा ने बड़ी ही सतर्कता और सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया है।

2.2. प्रभा खेतान के उपन्यासो में चिंतन पक्ष के विविध आयाम-

प्रभा खेतान के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते समय उनका चिंतन पक्ष उभरकर सामने आता है। अपने उपन्यासों के माध्यम से नारी के दर्द को वाणी प्रदान करना, उसके अस्तित्व की लड़ाई लड़ना एवं मानव संवेदना को उजागर कर हमें जागृत करना उनका प्रतिपाद्‌य रहा है।

प्रभा का संपूर्ण साहित्य चिंतन प्रधान है। उनके रचना कौशल में नवीनता और कथ्य की मजबूती है। जीवन के स्व अनुभवों की झलक उनकी सभी रचनाओं में मिलती हैं। प्रभा खेतान के समग्र उपन्यास साहित्य में अभिव्यक्त चिंतन के पक्ष को हम विभिन्न कोणों से प्रस्तुत कर सकते हैं।

2.2.1. जीवन के प्रति आस्था, जिजीविषा और सकारात्मक दृष्टि-

प्रभा खेतान के उपन्यास हमें जीवन संघर्षों का डटकर सामना करने का सकारात्मक संदेश देते है। 'आओ पेपे, घर चलें' की प्रभा, पिता की मृत्यु के पश्चात, बड़ा भाई विजय उसपर यौन अत्याचार करता है, उसे आगे की पढ़ाई के लिए आर्थिक सहायता नहीं करता फिर भी वह हार नहीं मानती और अपना अध्ययन पूर्ण करती है। 'अग्निसंभवा' की आइवी अपनी बेटी को सास द्वारा मार डालने के पश्चात पति का त्याग कर चीन से हांगकांग भाग आती है। अपनी सकारात्मक दृष्टि के कारण अपनी मेहनत के बल पर वह ब्राँच मैनेजर के पद पर आसीन होती है। 'स्त्री-पक्ष' की वृंदा सुमित से तलाक लेने के पश्चात अपना बुटीक खोलकर अपने पैरो पर खड़ी होती है। 'पीली आंधी' की पद्मावती अनमेल विवाह के पश्चात भी अपने परिवार की जिम्मेदारियों को भलीभाँति निभाती है। सोमा को भी अपने पति से प्रेम नहीं है। वह अपने अध्यापक सुजीत सेन से प्रेम करती है। अपने संसार का त्याग कर बच्चे के लिए सोमा गौतम से तलाक लिए बिना सुजीत के साथ रहने लगती है। सुजीत की पत्नी चित्रा इस घटना को सकारात्मक दृष्टि से ग्रहण कर सोमा को अपने पैरो पर खड़ी करती है। बच्चे को अपना नाम देकर वह घर से निकल जाती है।

'आओ पेपे, घर चलें' की प्रभा मारवाड़ी समाज की होने के बावजूद अपने वजूद और आर्थिक निर्भरता प्राप्त करने हेतु विदेश चली जाती है। वापस आने पर भारत में 'फिगरेट' नामक संस्था की स्थापना करती है।

'अपने-अपने चेहरे' में रमा का दूसरी औरत के रूप में जीवन चित्रण प्रस्तुत किया गया है। उसके जीवन में शुरू से लेकर अंत तक संघर्ष दिखाई देता है। उसका संघर्ष परिवार से, समाज से और खुद अपने आपसे है। राजेंद्र गोयनका की दूसरी औरत होने के कारण उसे समाज से बहिष्कृत और अपमानित होना पड़ता है।

इस प्रकार लेखिका ने जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टि रखनेवाली प्रभा, आइवी, सोमा, चित्रा, पद्मावती, रमा आदि पात्रों को चित्रित किया है। ये पात्र पाठकों को नई जीवन दृष्टि देते हैं।

2.2.2. स्त्री विमर्श-

वस्तुतः नारी मुक्ति के ईद-गिर्द रचा गया साहित्य स्त्री विमर्श का साहित्य बन जाता है। स्त्री विमर्श एक ऐसा आंदोलन है जो नारी को उसके अधिकारों के प्रति सचेत करते हुए उसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक क्षेत्रों में संपूर्ण स्वतंत्रता की माँग करता है।

जीवन में स्त्री-पुरूष की भूमिका एकात्म होने की नहीं बल्कि पूरक होने की है। स्त्री-विमर्श की बात मात्र स्त्री-पुरूष के बीच संबंध संतुलन की नहीं बल्कि समाज और परिवार की व्यवस्था के बदलाव की है। मूलतः स्त्री विमर्श नारी की अस्मिता की खोज करते हुए उसे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक स्वतंत्रता के साथ स्त्री को खुला आकाश देकर उसे मानव के रूप में जीने लायक वातावरण बनाकर नारी के सशक्तिकरण पर बल देता है। हिंदी के वर्तमान उपन्यास साहित्य में स्त्री की त्रासदी और विडंबना, उसकी शोषित स्थिति, उसकी आर्थिक, सामाजिक पराधीनता, सामंतीय मूल्यों, रूढिग्रस्त मान्यताओं और धारणाओं से जुड़े प्रश्नों को खुले, तीखे एवं साहसपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

आज की लेखिकाएँ पूरे दम-खम के साथ स्त्री के अनछुए पन्नों को बेबाकी से खोलने लगी है। आज के उपन्यास पूरी पारदर्शिता के साथ स्त्री स्वतंत्रता के भ्रामक बाहरी आवरणों को भेदकर स्त्री की अंदरूनी दुनिया में घुसपैठ करने लगे है। सच तो यह है कि स्त्री अपनी कर्मठता, जुझारूपन और जीवंतता की लाठी पकड़ अपने खोए वजूद को दुबारा हासिल कर सकती है। वह खुद अपनी अजस्त्र शक्तियों को पहचान अपने जीवन-लक्ष्य तक पहुँच सकती है।

प्रभा खेतान चरित्रों और देशकाल को प्रामाणिकता के साथ बुननेवाली उपन्यासकार है। उनका स्त्री चरित्रों का बेबाकी से किया गया चित्रण अपने आप में

स्त्री विमर्श को एक नई दिशा देता है। समस्याओं को ढोते हुए, आँसू बहाते हुए आज की स्त्री जीवन जी रही है।

'आओ पेरे, घर चलें' और 'अपने-अपने चेहरे' में लेखिका के मन का अंतर्द्वंद्व हमें दिखाई देता है। एक और वे स्त्री की स्वतंत्रता चाहती है, तो दूसरी और इसके कारण नारी के बिगड़ जाने का भय भी उनके मन में है। इस उपन्यास में जिस मारवाड़ी समाज का वर्णन किया गया है, वह हमारे ही समाज का अंग है। लेखिका ने पारिवारिक संबंधों को उनकी अच्छाई-बुराई, ईमानदारी-बेईमानी, अमीरी-गरीबी को यथार्थ ढंग से प्रस्तुत करने का सशक्त प्रयास किया है तथा यह बताने का भी प्रयत्न किया है कि मारवाड़ी समाज की एकमात्र विशेषता उनकी अर्थप्रियता है।

प्रभा खेतान के 'पीली आंधी' उपन्यास में विधवा के दर्दनाक जीवन का चित्रण किया गया है। अनमेल विवाह में बंधी रूपवती पद्मावती माधो की मृत्यु के पश्चात अकेली हो जाती है परंतु अपने कर्तव्य को ध्यान में रखकर अपनी जिम्मेदारियों को निभाती है। वह मायामोह के पीछे न लगकर अपने परंपरागत वैधव्य में जीने को मजबूर हो जाती है।

'अपने-अपने चेहरे' की मिसेज गोयनका नारी जीवन को पति के पैरोंतले रौंदी जानेवाली घास समझती है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया का जीवन कई संकटों से घिरा है। बचपन से उपेक्षित जीवन जीनेवाली, माँ के प्यार को तरसने वाली, भाई एवं अध्यापक द्वारा छली गई प्रिया विवाह के पश्चात नरेंद्र द्वारा भी अपमानित एवं प्रताड़ित होती है। बचपन से संघर्षरत प्रिया पति से तलाक लेकर अंततक संघर्षमयी जीवन गुजारती है और अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित करती है। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में 'प्रिया' जीवनभर दु:ख सहती हैं। वह न दु:खों से टूटती है न हारती है, बल्कि जो है उसे स्वीकार कर जिंदगी अपने मन के मुताबिक जीती है।

परिवर्तन को स्वीकार कर लेना व्यक्ति की नियति बन जाती है। इसी के अनुसार घरवालों के विरोध के बावजूद भी सोमा सुजित से प्यार कर उसके घर रहने चली जाती है। उसके बच्चे को भी जन्म देती है। इस प्रकार एक विवाहित स्त्री का

दूसरे पुरूष के साथ संबंध होना और उसे सबके सामने स्वीकार करने की हिम्मत दिखाना इसमें लेखिका ने आधुनिक विमर्श को प्रकट किया है।

स्त्री विमर्श का उद्‌घाटन करना प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का उद्‌देश्य न भी रहा हो फिर भी उनके उपन्यासों के चरित्र स्त्री विमर्श को उद्‌घाटित करने में सफल हुए हैं। प्रभा खेतान ने आशावादी, सकारात्मक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। लेखिका ने आत्मनिर्भर, जिजीविषापूर्ण, परंपरागत मूल्यों का स्वीकार करनेवाले असहाय, पीड़ित, विद्रोही तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को अभिव्यक्त करनेवाले विभिन्न प्रकार के चरित्रों का निर्माण करके नारी-विमर्श को उद्‌घाटित किया है।,

'अपने-अपने चेहरे' की रमा दूसरी औरत की पीड़ा सहने के बावजूद आत्मनिर्भर है। वह मिस्टर गोयनका के बच्चों की माँ न होने के बावजूद एक माँ होने की सारी जिम्मेदारियाँ बखूबी निभाती है। यह स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व और व्यक्तित्व को स्थापित करने वाली नारी है।

पितृसत्ताक समाज में स्त्री को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं दी जाती थी। परंतु आधुनिक युग में तेजी से बदलते जा रहे सामाजिक और नैतिक मूल्यों के कारण नारी अपने आपको अभिव्यक्त कर रही है। प्रभा खेतान के उपन्यासों में स्त्री को इसी नये रूप में चित्रित किया गया है। स्त्री-पक्ष की वृंदा तलाक लेने से पहले वकील से कहती है-"मुझे पैसे मिलने चाहिए, मैंने काम किया है, घर बनाने में मेहनत की है, सुमित ने रूपए मेरी सहायता से कमाये थे। इन रूपयों पर मेरा भी अधिकार होना चाहिए। भविष्य में घर चलाने और बच्चों की पढ़ाई-लिखाई पर जो खर्च होगा वह अलग से देना होगा नहीं तो सुमित ले जाये अपने बच्चों को। "[52]

दु:खों को झेलने की सहनशक्ति स्त्रियों में बचपन से ही होती है। जीवन के प्रति आस्था एवं जिजीविषा ही स्त्री की जीवनी शक्ति होती है। प्रभा खेतान के उपन्यासों में जिजीविषा से परिपूर्ण नारी का यथार्थ चित्रण हुआ है। 'छिन्नमस्ता' की नीना नाजायज औलाद की जिंदगी जीते हुए भी अपना अलग अस्तित्व स्थापित करती है। इस पात्र द्‌वारा लेखिका ने स्वाभिमानी नारी को चित्रित किया है।

इस प्रकार प्रभा खेतान के उपन्यासों में असहाय नारी की मानसिक स्थिति, असहाय, पीड़ित होकर भी जिजीविषा रखनेवाली नारी का चित्रण यथार्थ रूप में हुआ है। उसी तरह पति-पत्नि के आपसी झगड़े, दुरियाँ, मनमुटाव, विवाह बाह्य संबंध, स्त्री-पुरूष समानता आदि नारी विमर्श के विभिन्न आयाम प्रस्तुत किए हैं।

2.2.3.रिश्तों का खोलखलापन-

'अपने-अपने चेहरे' उपन्यास में आज के अर्थप्रधान युग में रिश्तों के खोखलेपन को अभिव्यक्त किया गया है। कुणाल द्वारा परित्यक्त रीतू जब मायके आती है तो परिवार वाले उसे तरह-तरह की बातें सुनाते हैं। विवाह के बाद बेटी को पराया समझा जाता है। इसमें राजेंद्र गोयनका व सरला के बीच का रिश्ता भी समाज के दिखावे के लिए होता है।

'तालाबंदी' में भी श्यामसुंदर जी के परिवारवाले उनसे केवल अर्थ के कारण जुड़े रहते है। 'पीली आंधी' में सोमा और गौतम एक-दूसरे से प्यार नहीं करते इसलिए सोमा गौतम का त्याग कर सुजित के पास चली जाती है। 'आओ पेपे, घर चले' के डॉ.डी क्लारा के प्यार में फँसकर एलिजा से तलाक लेते है। 'अग्निसंभवा' में आइवी का पति उसे मारता पीटता है। इसलिए वह उसे छोड़कर हांगकांग भाग जाती है। 'एड्स' उपन्यास की सोफिया एण्डू के दोस्त से शारीरिक संबंध स्थापित कर पति से विश्वासघात करती है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में प्रिया का पति नरेंद्र हर महीने सेक्रेटरी बदलता है। प्रिया का बढ़ता हुआ व्यापार उसे सहन नहीं होता। 'स्त्री-पक्ष' की वृंदा का पति सुमित सुनिता के प्यार में फँसकर वृंदा को तलाक देता है।

इस प्रकार प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में रिश्तों के खोखलेपन को उद्घाटित किया है। आधुनिकता के नाम पर नैतिकता का पतन हो रहा है। नारी-पुरूष दोनों में अहं की भावना निर्माण हो रही है। जिससे पति-पत्नी के संबंधों में दरारें पड़ रही है। परिवार के अन्य रिश्ते भी खोखले हो रहे हैं। उसमें केवल स्वार्थ है। प्रभा ने इसी स्वार्थ और खोखलेपन को व्यक्त किया है।

2.2.4.औरतों की रूढ़िग्रस्तता-

भारतीय समाज में रूढ़ियों-परंपराओं का विशेष महत्व रहा है। इसी कारण रूढ़ियों को निभाते हुए स्त्री को बचपन से ही अन्याय-अत्याचार का शिकार होना पड़ता है। उसे बचपन से ही स्त्री होने का एहसास दिलाया जाता है। उसके हर व्यवहार को बंधनों में बाँध दिया जाता है और जब वह उनसे बाहर निकलने की सोचती है तो उसे विद्रोही करार दिया जाता है। ससुराल में तो उसकी आजादी खत्म हो जाती है। 'स्त्री-पक्ष' में प्रभा ने यह स्पष्ट किया है कि औरतों को बचपन से ही पुरूषों से अलग दर्जा देकर उसे स्त्रीत्व का एहसास कराया जाता है। समाज में बढ़ रही हिंसात्मक वृत्ति के कारण लड़कियों की सुरक्षा के बारे में माँ-बाप चिंतित है इसी प्रश्न को लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में उभारा है।

प्रभा खेतान के उपन्यास रूढ़ियों में जकड़ी स्त्री की व्यथा, दासता, शोषण, असमर्थता एवं मजबूरी को अभिव्यक्त करते हैं।

2.2.5.स्त्री की स्वार्थी वृत्ति-

स्त्री की अहंवादी स्वार्थी एवं दिखावे की वृत्ति को प्रभा ने अपने उपन्यासों में उजागर किया है। 'अर्थ' के लालच ने आज प्रत्येक व्यक्ति को स्वार्थी बना दिया है। 'पीली आंधी' की लता इसका अपवाद नहीं है।

2.2.6.पूँजीपति मारवाड़ी समाज की विसंगतियाँ-

प्रभा खेतान का जन्म मारवाड़ी परिवार में हुआ था। मारवाड़ी समाज को उन्होंने भोगा था। अपने भोगे हुए यथार्थ को लेखिका ने सहजता के साथ प्रस्तुत किया है। उन्होंने हमारे सामने सच्चाई के साथ मारवाड़ी समाज की विसंगतियों का लेखा-जोखा रखा है। प्रभा मारवाड़ी समाज की प्रवृत्तियों को पाठकों के सामने रखती है। इस समाज के पूँजीपति आजादी की लड़ाई नहीं लड़ सके क्योंकि हर समय वे अपनी जान-माल की चिंता करते रहें। इस समाज के पूँजीपति रिश्तों का मूल्य पैसों में आँकते हैं। ये लोग पैसों के लिए घर-बार, पत्नी, बाल-बच्चे आदि सभी को भूल जाते हैं। पैसा ही उनके लिए सबकुछ होता है। मारवाड़ी समाज के पुरूष नवविवाहित स्त्रियों की फिक्र न करते हुए पैसा कमाने के लिए परदेश चले जाते हैं। इस समाज

का पूँजीपति वर्ग अवैध यौन संबंधों में अधिक रूचि रखता हैं। 'छिन्नमस्ता' के मि.अग्रवाल तिलोत्तमा से प्रेम करते है। 'अपने-अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका रमा को चाहते है। मिस्टर गोयनका का दामाद कुणाल रीतू का त्याग कर दूसरी औरत के प्यार में फँस जाता है।

इस प्रकार खेतान ने मारवाड़ी समाज के पूँजीपतियों की आत्मकेंद्रितता, उनके द्वारा स्थापित अवैध यौन संबंध, नारी शिक्षा के प्रति विरोधी दृष्टिकोण आदि के माध्यम से पूँजीपति वर्ग की विसंगतियों का चित्रण किया है।

साहित्य निरूद्देश्य नहीं होता। प्रत्येक साहित्य में उसका उद्देश्य छिपा रहता है। प्रभा खेतान का उपन्यास साहित्य पाठकों को जीवन को सकारात्मक दृष्टि से देखने की प्रेरणा देता है। वह पाठक में संवेदना जगाता है। 'आओ पेपे, घर चले' का 'पेपे' प्रतीकात्मक रूप में उभरता है। वह जानवर होते हुए भी मानवीय संवेदना से युक्त स्वामिभक्त कुत्ता है। वह अत्यंत भावुक और संवेदनशील है।

प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य में प्रेम, अस्मिता, मानवता, संवेदना जैसे शब्दों की तलाश नजर आती है। जीवन की निराशा को भूलकर नये सिरे से जिंदगी जीने का संदेश है। उनके उपन्यासों में सकारात्मक दृष्टि के साथ जीवन जीने की ललक दिखाई देती है। वस्तुत: प्रभा खेतान का उपन्यास साहित्य मानव मन की हर परत को खोलता है।

इस प्रकार प्रभा खेतान के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते समय उनके चिंतन के विभिन्न आयाम हमारे सम्मुख परिलक्षित होते हैं।

निष्कर्ष-

प्रभा खेतान के उपन्यासों के कथ्य प्रधान एवं प्रासंगिक कथाओं से प्रभावी बने हैं। सभी घटनाओं में पारस्पारिक संबंध दिखाई देता है। उनमें विचारों की मौलिकता भी पायी जाती है। लेखिका अपनी मौलिक अनुभूति की अभिव्यक्ति अधिक विस्तार और सूक्ष्मता से करती है। कलात्मक ढंग से कथा का संयोजन कर कथानक का उन्होंने स्वाभाविक गति से विकास किया है। अपने भोगे हुए यथार्थ को उन्होंने उपन्यास के माध्यम से पाठकों के समक्ष रखा है। उनके उपन्यास घटना की सत्यता

के साथ-साथ पाठकों का मनोरंजन भी करने में समर्थ है। प्रभा खेतान ने मानव जीवन की-विशेषतः स्त्री जीवन की समस्याओं को सच्चाई के साथ चित्रित किया है। उनके उपन्यास युग, समाज तथा जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रभा जी अपने उपन्यासों के माध्यम से एक समर्थ, परिपक्व और उत्कृष्ट कथा शिल्पी के रूप में सामने आयी है। डॉ.अशोक मराठे उनके उपन्यासों के बारे में कहते हैं - "उनका समस्त उपन्यास साहित्य देश-विदेश की भूमि में आये अनुभवों का सच्चा लेखा-जोखा है। इसलिए उनके साहित्य को यदि अनुभूति की अभिव्यक्ति कहां जाए तो कोई गलत नहीं हो सकता।"[53]

प्रभा जी के 'तालाबंदी', 'अग्निसंभवा', 'छिन्नमस्ता', 'अपने-अपने चेहरे', 'पीली आंधी' जैसे उपन्यास उनके निजी अनुभवों पर आधारित है। कुछ उपन्यास व्यवसायिक तो कुछ मारवाड़ी समाज की भीतरी घुटन और छटपटाहट को लेकर लिखे गए है। प्रभा जी ने अपने जीवन में घटित घटनाओं का साक्षात्कार अपने उपन्यासों में करवाया है। 'आओ पेपे, घर चलें' उपन्यास की प्रभा, 'तालाबंदी' के श्याम बाबू, 'अग्निसंभवा' की प्रभा, 'एड्स' की प्रभा, 'छिन्नमस्ता' की प्रिया, 'अपने-अपने चेहरे' की रमा आदि पात्र हमें प्रभा खेतान के जीवन का परिचय देते हैं। विदेशी भूमि में नारी के जीवन का अनुभव 'आओ पेपे, घर चलें' में व्यक्त हुआ है। 'तालाबंदी' में श्याम बाबू के माध्यम से प्रभा जी ने व्यवसायिक जीवन के भोगे यथार्थ को उजागर किया है। 'अग्निसंभवा' में चीनी महिला आइवी का जीवन संघर्ष और 'एड्स' में एड्स इस भयावह बीमारी के कारण टूटता परिवार है। 'छिन्नमस्ता' में 'प्रिया' के माध्यम से अपने बचपन के भोगे यथार्थ को स्पष्ट किया गया है तो 'अपने-अपने चेहरे' में रमा के माध्यम से दूसरी औरत के दुख का एहसास कराया गया है।

इस प्रकार प्रभा अपने उपन्यासों में परंपरा को नकार कर आधुनिकता का स्वागत करती दिखाई देती हैं। वह प्रगति के पथ पर बढ़ते हुए रूढ़ियों को तोड़ अपने अंदर के भय तथा संदेह को दबाकर विद्रोह की अभिव्यक्ति द्वारा पुरूष के दंभ और मिथ्या अहंकार को तोड़ती नजर आती है। प्रभा जी स्वयं को तोड़ती और तराशती हुई अलग अस्तित्व और पृथक व्यक्तित्व से सचेत रहती है। वह आत्मनिर्णय और

स्वाधीनता का पक्ष लेकर विभिन्न चुनौतियों को स्वीकारते हुए अपने अस्तित्व का जयघोष करती हुई नजर आती है। प्रभा खेतान के उपन्यासों का कथ्यात्मक विश्लेषण करते समय जीवन के प्रति आस्था, जिजीविषा और सकारात्मक दृष्टि, स्त्री विमर्श, रिश्तों का खोखलापन, औरतों की रूढ़िग्रस्तता, स्त्री की स्वार्थी वृत्ति एवं पूँजीपति मारवाड़ी समाज की विसंगतियाँ आदि चिंतन पक्ष के विविध आयाम उभरकर सामने आते हैं।

इस प्रकार प्रभा खेतान के उपन्यास केवल उपन्यास न होकर उनके भोगे हुए जीवन के प्रामाणिक दस्तावेज है, जो उपन्यास के विविध पात्रों के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत हुए है।

संदर्भ ग्रंथ-

1. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ.अशोक मराठे, पृ.41
2. वही, पृ.42
3. आओ पेपे, घर चलें, प्रभा खेतान, पृ.54
4. वही, पृ.73
5. वही, पृ.70
6. वही, पृ.24
7. वही, पृ.94
8. वही, पृ.96
9. वही, पृ.105
10. वही, पृ.145
11. तालाबंदी, प्रभा खेतान, पृ.19
12. वही, पृ.91
13. वही पृ.56
14. मन्नू भंडारी के साहित्य में सामाजिक समस्याएँ,डॉ.माधवी जाधव, पृ.52
15. वही, पृ.8
16. हंस के विमर्श-1, संपा. राजेंद्र यादव, पृ.181
17. अग्निसंभवा, प्रभा खेतान, हंस, मार्च 1992, पृ.57
18. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ.अशोक मराठे, पृ.51
19. नारी और दलित : कुछ और मुद्दे, प्रभा खेतान, हंस के विमर्श-1, संपा, राजेंद्र यादव, पृ.184
20. एडस, प्रभा खेतान, 'आज' पूजा वार्षिकांक, पृ.76
21. वहीं पृ.68
22. वहीं पृ.85
23. वहीं पृ.84
24. वहीं पृ.86

25. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृ.102
26. वहीं, पृ.107
27. वहीं, पृ.10
28. वहीं, पृ.11
29. वहीं, पृ.143
30. वहीं, पृ.146-147
31. वहीं, पृ.179
32. 'विकास संस्कृति पत्रिका' संपा. संदीप सिंह, अप्रैल-मई-जून 2012, पृ.18
33. पीली आंधी,प्रभा खेतान, पृ.8
34. वहीं, पृ.3-4
35. वहीं, पृ.9
36. 'विकास संस्कृति पत्रिका' संपा. संदीप सिंह, अप्रैल-मई-जून 2012, पृ.17
37. पीली आंधी, प्रभा खेतान, पृ.93
38. वहीं, पृ.242
39. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ.अशोक मराठे, पृ.59
40. अपने-अपने चेहरे, प्रभा खेतान, पृ.9-10
41. वहीं, पृ.124
42. वहीं, पृ.43-44
43. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ.अशोक मराठे, पृ.60-61
44. स्त्री-पक्ष, प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग पत्रिका, दूसरी कड़ी, 14 फरवरी 1999, पृ.20
45. वहीं, पृ.20
46. वहीं, पृ.21
47. वहीं, पृ.22
48. वहीं, पृ.20
49. वहीं, 1 अगस्त 1999, पृ.21

50. वहीं, 1 अगस्त 1999 पृ.23

51. प्रभा खेतान के साहित्य में नारी विमर्श, डॉ.कृष्णा जाखड़, पृ.204

52. स्त्री पक्ष, प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग पत्रिका, इक्कसवीं कड़ी, 4 जुलाई 1999, पृ.20

53. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ.अशोक मराठे, पृ.64